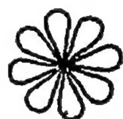


अभिषेक पूजा-पाठसंग्रह



प्रकाशक—

माणिकचंद सरावगी, कलकत्ता

(फार्म रामवल्लभ रामेश्वर)

प्रति १०००] वीर सं० २४६८ [मूल्य—जिनेन्द्र-पूजन

मुद्रक :—
नेमिचन्द बाकलीवाल
सन्मति आर्ट प्रेस
६२, बासतल्ला स्ट्रीट, कलकत्ता।

अभिषेक पूजा संग्रहकी सूची



स्वर्गीया रेवतीबाई

"परिवर्तनि संसारे मृतः को वा न जायते"—इत्यादि श्लोक वास्तवमें पर्यायका नश्वरपना प्रकट कर देते हैं।

यह जीव संसारावस्थामें आवागमनसे छुटकारा नहीं पा सकता है, किन्तु मनुष्य पर्यायको पाकर मुक्त होनेका मार्ग अवश्य निकाल सकता है और उसपर चलकर वह कृतकार्य भी हो सकता है। इसके लिये एक नहीं कितने ही भवोंमें परोपकारी सच्चारित्री और तपस्वी होनेकी आवश्यकता आचार्योंने बताई है। तदनुकूल मुमुक्षु मनुष्य अपने-आपको परोपकार, त्याग और प्रभु-भक्तिमें यथाशक्ति लवलीन करनेका यत्न करता रहता है, ऐसे ही व्यक्तियोंमें स्व० रेवतीबाईजीका स्थान भी है। आपकी मृत्यु २६ वर्षकी छोटी उम्रमें ही हो गई, परन्तु इतने अल्प कालमें भी बहुत-कुछ परमार्थ कर लिया। जो समय यौवनकी मोहकताका होता है, उस समयमें श्रावकोचित कार्योंमें उक्त देवीने बड़ी सावधानीसे काम लिया था। आप सेठ गणेशदासजी गोयनका, शिलोंग निवासीकी पुत्री तथा श्रीमान सेठ रामेश्वरजी सरावगी,

(फार्म सेठ रामवल्लभ रामेश्वर) कलकत्ते वालोंके सुपुत्र चि० माणिकचन्दजी सरावगीकी सौभाग्यवती पत्नी थीं। आपके ३ पुत्री एवं २ पुत्र इस प्रकार छोटी-छोटी ५ सन्तानें हैं। चि० देवीप्रसाद, केशरदेव, सावित्री, दमयन्ती, सुशीला। विवाह होनेके कुछ वर्ष बाद ही चि० माणिकचन्दजी सपत्नीक आरा आकर महीने दो महीने रहे थे। उस समय "जैन बाला विश्राम' के परिकरके योगसे रेवतीबाईजीको धर्ममें बहुत श्रद्धा हो गई। श्री१००८ जिनेन्द्रका पूजन स्तवन आदि करने देखने और स्वाध्यायादि करनेका अच्छा अवसर मिल गया था, तबसे वे जीवन-भर जिन-भक्तिमें दत्तचित्त रहीं। आपको अपनी हस्तरेखा दिखानेका बड़ा शौक था, इससे अनेक ज्योतिषियोको दिखाया करतीं और केवल यही पूछतीं कि मेरी मृत्यु कब होगी। मतलब यह है कि सबसे अधिक अपने अन्त सुधारका ही उनको ध्यान था, तदनुसार बीमार होनेपर आपने अपने प्राइवेट रुपयोंका दान संकल्प कर दिया, किसी सासारिक कार्यमें कुछ भी लगानेका विचार न किया, केवल परोपकारके लिये ही सर्व अर्पण कर दिया, यों तो उक्त देवीजी तीर्थयात्रा करनेमे और त्यागियोंकी सेवामें व मन्दिरके उपकरण बनानेमे सदैव खर्च किया करती थी। आप गुणावाजी यात्राको गईं वहा विशाल श्रीजिन बिम्बको बाहर विराजमान देखकर और इसमे अविनय देखकर शीघ्र ही द्रवीभूत हो गईं और श्रीजीकी वेदी बनवानेका

निश्चय कर आईं, जो कि बनकर तैयार हो गई है। इसी प्रकार चाँदीके मनोहर श्रीजिन बिम्ब एवं मोती सुवर्ण चाँदीके छत्र आदि भी आपने निर्माण कराये थे। आपका जन्म चैत बदी २ सं० १९६६ तथा स्वर्गवास माह सुदी १४ सं० १९९५ मे हुआ।

श्री जयकीर्ति मुनि महाराजका संघ दक्षिणसे श्री सम्मेदशिखरजीकी बन्दनाको आया था और बीमारीके कारण आगे गमन न हो सकनेसे ईसरी (पारसनाथ) में ठहर गया, तब आप वहाँ गईं थीं, पावापुरजीमें जाकर भी संघके दर्शन किये थे, केवल दर्शन ही नहीं आपके स्वसुर श्री रामवल्लभजी रामेश्वरजीकी ओरसे संघके बिहारका प्रबन्ध हजारों रुपये लगाकर किया गया था। आपके दान द्रव्यमें से उक्त सेठजीने जैनबाला विश्राम आरामें एक विशाल कमरा छात्राओंके रहनेके लिये "रेवतीहॉल" नामसे बना दिया है एवं उसमें १० छात्राएँ उक्त स्वर्गीया देवीकी ओरसे रहती हैं, इसकी व्यवस्था भी कर दी है, जिसमें लगभग ६०) ७०) मासिक व्यय होता है। इसी प्रकार कलकत्तेके दिगम्बर जैन दातव्य औषधालयको भी अच्छी सहायता दी गई है। उक्त देवीने गौहाटीकी कन्यापाठशालाको भी कई वर्ष तक चलाया था। यह कहना अनुचित न होगा कि उक्त बाईजीके दान-द्रव्यका चारों दानोंमें अच्छा उपयोग हुआ है, उन्हींकी स्मृतिमें यह पुस्तक भी प्रकाशित की जाती है। इससे

यह विशेषता है कि महिलाओं द्वारा रचित पूजन प्रकाशित की जाती हैं, जो कि जैन समाज के लिये सर्वप्रथम रचना है। अभी तक पूजन पाठ सव पुरुषोंके बनाये ही प्रचलित हैं और उनमें पुरुषवाची शब्दोंका ही प्रयोग है किन्तु इन नवीन पूजनमें स्त्रीलिंगवाची शब्दोंका प्रयोग किया गया है।

श्रीमती जयनेमी देवी व श्रीमती सुशीला देवी आराकी इस नवीन कृतिसे स्त्री-समाजमें नवीन उत्साहकी वृद्धि होगी, ऐसी आशा है। ये दोनों वहनें स्व० वावू धनेन्द्रदासजी जैन रईस आराकी पुत्रियां हैं, आपकी मातेश्वरी श्री नेमसुन्दरजीने जैनवाला विश्राम आरामें श्री१००८ वाहुवलि स्वामीकी अति विशाल मनोहर मूर्ति स्थापित की है और पास ही में सहस्त्रकूट चैत्यालयकी भी स्थापना हुई है। इसी हर्षोपलक्षमें उक्त वहनोंने पूजनकी पुष्पाजलि श्री जिन चरणोंमें भेंट की है। रचना अच्छी हुई है, प्रत्येक पदमें भक्ति और वैराग्यका अच्छा समावेश है।

—ब्र० चन्दावाई, आरा

स्त्री-कर्तव्य और दिनचर्या

गृहस्थी एक रथ है। रथको यथेच्छ स्थानपर पहुँचनेके लिये जिस प्रकार सुदृढ़ दो धुराओंकी आवश्यकता होती है, उसी प्रकार इस गृहस्थीरूपी रथको भी अभीप्सित उद्देश्यकी सिद्धिके लिये योग्य धार्मिक और शिक्षित स्त्री और पुरुषकी जरूरत है। जितने अंशमें जिसमें त्रुटि होगी वह उतने ही अंशमें अपने उद्देश्यको पालनेमें दूर होगा। योग्य गृहस्थ वही कहलाता है कि जिसकी गृहिणी भी तदनुरूप होती है। अथवा गृहिणीके योग्य होनेपर पुरुष तदनुरूप होता है। ऐसी ही गृहस्थीका जीवन सुखी-जीवन कहलाता है।

इस प्रसंगमें मैं अपनी बहिनोंसे स्त्री-कर्तव्यके विषयमे कुछ निवेदन करना चाहता हूँ। आशा है कि हमारी बहिनें इस निवेदनपर ध्यान देंगी।

स्त्री-अवस्था तीन अवस्थाओंमें विभक्त है। प्रथम अवस्था कन्या अवस्था है, जिसको अविवाहिता अवस्था कहते हैं। दूसरी युवावस्था—विवाहिता अवस्था। तीसरी वृद्धावस्था। इन तीनों अवस्थाओंमें हमें अपना समय किस प्रकार व्यतीत करना चाहिये एवं क्या कर्त्तव्य होना चाहिये बस इसी बातको समझ लेना और तदनुरूप प्रवृत्ति करना मेरे इस निवेदनका फल है।

मैं यह बात दावेके साथ कहनेके लिये तैयार हूँ कि कन्या-जीवन गुणग्राहकताके लिये जैसा पवित्र जीवन है वैसा अन्य कोई जीवन नहीं है। इस जीवनमें सिवा पढ़ने-पढ़ानेके और कोई दूसरी चिन्ता नहीं रहती है। अभिभावकोंको आवश्यकता इस बातकी है कि वे अपनी कन्याओंके संस्कारोंको उज्ज्वल बनावें। उनको शुरूमें ही ऐसी शिक्षासे शिक्षित करना चाहिये जिससे वे स्वकर्तव्यको पहचानें एवं अपने भावी-जीवनको धार्मिक जीवन बनावें। वर्तमान समय स्त्रियोंको भोग-विलासके बाह्य चाकचिक्यमें फंसाकर स्वकर्तव्योन्मुख बनानेका है, इसलिये शुरूसे ही उनकी आत्मामें ऐसे संस्कार जमाना चाहिये जिससे वे भविष्यमें अपने जीवनके साथ-साथ अपने पतिके जीवनको एवं अपनी सन्तानके जीवनको शान्तिमय आदर्श-जीवन बना सकें क्योंकि भविष्यमें ये कन्या ही तो माता बनेंगी।

कन्याओंकी शिक्षा किस रूपमें होना चाहिये इस विषयमें कितने ही मतान्तर हैं परन्तु मैं तो यह कहूँगा कि कन्याओंको हिन्दीका पूर्ण ज्ञान कराते हुए उनको धार्मिक शिक्षा देना चाहिये। धार्मिक शिक्षा लेनेके लिये उन्हें संस्कृतका भी विशेष नहीं तो क्रिया, कारक, कर्ता, सन्धि, अन्वय, पदच्छेद आदिका ज्ञान करा देना आवश्यक है। इसके सिवा घर-गृहस्थीके व्यवहारमें आने योग्य हिसाव, दिशाओंका ज्ञान, मामूली इङ्गलिशका ज्ञान कराना भी आवश्यक है। इसके सिवा विशेष आवश्यकता कन्याओंको इस बातको समझानेकी एवं पढ़ानेकी है कि वे अपने माता-पिताओंके साथमें किस प्रकार व्यवहार करें, उनको किस तरह प्रणाम करें। घर आये हुए मिहमानोंके साथमें किस प्रकार व्यवहार करें। किसीसे अगर बातचीत करनी हो तो कैसे करें। दर्शन करनेके लिये जांय तो कैसे दर्शन करे। सुस्वादु और रुचिकर रसोई किस प्रकार बनावे। विवाह होनेके बाद पतिके साथ किस प्रकार बर्ताव करें। सास श्वसुर, देवर देवरानी, जेठ जिठानी और ननद बहनोईके साथ किस प्रकार व्यवहार करें आदि बातोंका ज्ञान कराना इसी अवस्थामें आवश्यक है। शिशुपालनकी शिक्षा भी उन्हें अनिवार्य रूपमें देनेकी आवश्यकता है। हमारी कुछ एक माताओंका एवं शिक्षा देनेवाली गुरानीका ऐसा ख्याल रहता है कि ये व्यावहारिक बातें तो लड़की स्वतः ही सीख

लगीं, इनको इस समय पढ़ानेकी क्या आवश्यकता है। इस समय तो छहढाला, रत्नकरण्ड और भक्तामरजी रटा दो। मैं इन पुण्यपाठोंके याद कानेका विरोध नहीं करता हूँ किन्तु मेरा अभिप्राय यह है कि इन पाठोंको तो याद कराओ ही साथमें व्यावहारिक शिक्षा भी दो और वह शिक्षा अनिवार्य रूपमें दो जिससे कि वे कन्यायें स्वकर्त्तव्यको पहिचान। इसके सिवा उनको सिलाई एवं मनोविनोदके लिये कुछ संगीतकी शिक्षा भी देना आवश्यक है। मेरी बहन और मातायें अपनी कन्याओंको प्रारम्भसे ही इस विषयकी शिक्षा दिलानेकी कामना रक्खेंगीं तो मैं कह सकता हूँ कि वे कन्यायें भविष्यमें योग्य गृहिणी बनेंगीं और अवश्य बनेंगीं। आज सती सीता, मनोरमा, राजमती, महारानी चेलना और अंजनासुन्दरी आदि स्त्री-रत्नोंका नाम बड़े गौरवके साथ पुकारा जाता है, जिनकी पवित्र गुणगाथा सुनकर हमारा जीवन पवित्र और धन्य बन जाता है। यह सब कुमारी अवस्थामें ऐसी योग्य धार्मिक शिक्षा प्राप्त करनेका ही फल है। अतएव विवाह होनेके प्रथम ही कन्याओंको ऐसी सुशिक्षासे शिक्षित कर देना चाहिये जिससे वे आपन्न गृहस्थ-जीवनको स्वर्गीय जीवन-आनन्दका जीवन बना सकें। जो कन्यायें प्रारम्भसे ही अपने मनोयोगको लगाकर स्वकर्त्तव्यको इसी कुमारी अवस्थामें जान लेती हैं वे संसारमे अपनेको आदर्शरूपमें उपस्थित करती हैं।

दूसरी—विवाहित अवस्था

सीताका जिस समय विवाह हो गया और वह अपने श्वसुरगृहको जाने लगी, उस समय उसके पिता राजा जनक अपनी कन्याको शिक्षा देते हैं कि पुत्रि। अपने पतिके घरपर आनेपर तू उनका सत्कार करनेके लिये उठकर खडी हो जाना, जो वे कहें उसको विनयके साथ सुनना, पतिके बैठनेपर अपनी दृष्टि उनके चरणोंमें रखना, पतिकी सेवा स्वयं करना और पतिके सोनेके पीछे सोना और जागनेके पूर्व उठना, ये कुल-वधुओंके काम है। राजा जनकने थोडेसे शब्दोंमें कन्याकी विवाहित अवस्थाके कर्त्तव्यको समझा दिया। बहिनो। स्त्रीके पतत और अभ्युत्थानकी यही अवस्था है। इसी अवस्थाको पाकर योग्य गृहिणी मुनिदान, जिनपूजन, जिन-अभिषेक, शास्त्र स्वाध्याय, व्रत, संयम, ब्रह्मचर्य परिपालन, पतिभक्ति आदि कार्य.के द्वारा अपने जीवनको अभ्युत्थानके मार्गमें ले जाती हैं और इसी अवस्थामें वे कुसंगतिमें पडकर शीलरत्नसे हाथ धो बैठती हैं। यही उनके जीवनको पतित-जीवन बनानेका रास्ता बन जाता है। जिस समय मैं अपनी बहिनोंके वर्तमान जीवनकी तरफ लक्ष्य डालता हूँ तो मुझे बहुत दुःख होता है। इसका कारण मैं अपनी बहिनोंकी अज्ञानता ही समझता हूँ। बहिनोंमें दिन

प्रनिदिन विलासिता इतनी वढती जाती है कि वे अपने आपेसे बाहर हो गई हैं। उस विलासिताने हमारे शुद्ध खानपानको चौपट कर दिया, हमारे घरवालोंको बाजारू खोमचा चाटनेवाला वना दिया, यहा तक वे आलसी बन गईं कि जो घरकी रसोई बनाना उनका प्रधान कर्त्तव्य था उसको भी छोड चुकीं और ठाकुरके आश्रित हो गईं ठाकुरने जैसा कुछ भोजन वनाया सो घाल दिया और खा लिया। पानी छाननेकी विधि भूल गई, सिर्फ यही बात याद रह गई कि आज मन्दिरजीमे फलानेकी स्त्री बढिया जोरजटकी साडी और जम्फर पहनकर आई थी वैसा ही मुझे चाहिये या मोती जवाहरातका हार होना चाहिये। छिः छिः, क्या कहा जाय जो स्त्री पतिकी अर्धाङ्गिणी सहधर्मिणी कहलाती है, प्रत्येक धर्मकममे उसका साथ देनेवाली है उसकी यह दशा कि वह अपने स्वामीको रसोई भी करके नहीं घाले? इसीलिये आज हमारे निजमे और हमारी सन्तानके संस्कार मलिन हो रहे हैं। स्त्रीको पतिके लिये मन्त्रीका काम करना चाहिये उसके ऊपर कोई आपत्ति आवे तो उसको धैर्य वॅधाना चाहिये। यह नहीं कि वह भी उसके साथ धैर्य छोड बैठे।

यहा मैं यह भी बतला देना चाहता हूँ कि मनुष्य वालाबाला इतस्ततः डोलते हैं यह अपराध भी हमारी बहिनोंका ही है, उनमें इतनी योग्यता कहिये सहूर नहीं, इतनी आकर्पणता

नहीं कि जो वे अपने प्रेमसे उनको—पतिको बन्धनबद्ध कर सकें, इसलिये नीतिकारोंने स्त्रीके कर्तव्यमें रती समयमें वेश्याके माफिक आचरण करनेको लिखा है, पतिके कार्य करनेमें दासीके समान आचरण करनेको, भोजन कराते समय माताके समान और विपत्तिमें मन्त्रीके समान आचरण करनेवाली कहा है। ऐसी ही स्त्रीकी प्रशंसा की है।

मैं तो यहा तक कहनेके लिये तैयार हूँ कि जो स्त्री गृहस्थावस्थामें पतिसेवा करना अपना कर्तव्य नहीं समझती ब्रह्मचर्यको अपना भूषण नहीं समझती वह कितना ही जप तप नियम पालन करे उसका वह सब व्यर्थ है, विडम्बना मात्र है। वह स्त्री नहीं उसको तो पापिष्ठा कहना चाहिये। हा, जो स्त्री पतिकी आज्ञानुकूल चलती है, उसकी हर प्रकारसे सेवा-सुश्रूषा करती है, उसके सुखमें सुखी और दुःखमें दुःखी रहती है, अपने शीलधर्मकी सर्वतोभावसे रक्षा करती है, अपने सास श्वसुरको वडा मानकर उनकी सेवा करती है अपने देवरको अपने पुत्रके समान मानकर आचरण करती है वह स्त्री भले ही यथाशक्ति—थोड़ा व्रत नियम करे वह अत्यन्त श्लाघनीय है। उसके जीवनको मैं आदरणीय जीवन मानता हूँ। ऐसी गृहस्थीमें सदा ही शान्ति रहती है, वह गृही कभी भी दुखी नहीं रहता। इसलिये इस विवाहित जीवनको आदर्श-जीवन बनानेके लिये उपर्युक्त बातोंपर ध्यान देना आवश्यक है।

तीसरी—वृद्धावस्था

यह अवस्था कुछ भी काम करनेकी नहीं है, इन्द्रिया शिथिल हो जाती हैं। यह अवस्था शान्तिमय जीवन वितानेके लिये है। कुटुम्बादिसे मोहको कम करके जो भी बने धर्मपूर्वक जीवन-यापन करनेके लिये है।

वैधव्य जीवन

यह एक तीव्र पापोदयसे होनेवाली चौथी अवस्था है। किसी बहिनके प्रबल पापके उदयसे यह अवस्था प्राप्त हो जाय तो उसको अपना जीवन बहुत सतर्कतासे विताना चाहिये। सादा शुद्ध और स्वल्प आहार करना, सादा पहरना, किसी प्रकारका आभूषण नहीं पहरना, विषयकषायोंको पुष्ट करनेवाली कथाओंको नहीं कहना और न सुनना, सदा ही साधुसंगति करना, साध्वियों के समागममें रहना, एकाशन और बीच-बीचमें उपवास करना, मनुष्योंके बीचमें नहीं रहना, त्रिकाल सामायिक करना, प्रतिदिन देवदर्शन, अभिषेक अर्चन करना, वैराग्यवर्धक शास्त्रोंकी स्वाध्याय करना, कुटुम्बादिसे मोहकी मात्रा कमती करना एवं किसी प्रकारका शृङ्गार नहीं करना आदि विधिके अनुसार उस बहिनको अपना वैधव्य जीवन विताना चाहिये।

घरके मनुष्योंका भी कर्तव्य है कि वे उसको पवित्र जीवन वितानेके लिये योग्य साधन जुटा देवें। आजकल कुछ लोग वैधव्य जीवनको एक अपशकुनका जीवन समझने लगे हैं और यही सोचकर उसका तिरस्कार करने लगे हैं सो यह उनकी भारी अज्ञानता है। वैधव्य जीवन आत्म-कल्याणका उत्कृष्ट साधन है, इसलिये उन बहिनोंको कि जिनके ऊपर यह विपत्ति आ गई अपना समय धार्मिक क्रियाओंके करनेमें ही बिताना चाहिये। आशा है कि हमारी बहिनें मेरे इस नम्र निवेदनपर ध्यान देकर अपने कर्तव्यका पालन करेंगीं।

दिनचर्या

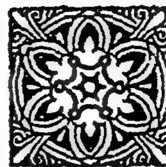
बहिनोंकी दिनचर्या किस माफिक होनी चाहिये। ये विपय अपनी-अपनी सुविधाके अनुसार निश्चय किया जाता है। संक्षेपमे साधारण नियम यह है कि सुबह ४ बजे उठकर हाथ-पाव धोकर णमोकार मन्त्रकी एक माला फेरनी चाहिये। पीछे कोई पाठ जो कण्ठस्थ हो उसको पढ़ना चाहिये। उसके बाद शौचादिसे निवृत्त होकर देवदर्शनके लिये जाना चाहिये। मन्दिर जाते समय कभी भी खाली हाथ नहीं जाना चाहिये। लौंग, बादाम, पिस्ता छुहारा,

तन्दुल, सुपारी, श्रीफल आदि इन चीजोंमें से किसीको चढ़ानेके लिये जरूर ले जाना चाहिये। मन्दिरमें जाते ही नि सहि निःसहि नि.सहि की आवाज करना चाहिये, पीछे भक्ति भावसे स्तुति बोलते हुए दर्शन करना चाहिये एवं परिक्रमा करना चाहिये। घरमें लड़का-लड़की हों तो उनको भी साथमें ले जाना चाहिये, पीछे जिनेन्द्र भगवानकी पूजन—धुली अथवा सूखी सामग्री से जैसी योग्यता मिले करना चाहिये। पश्चात शास्त्र स्वाध्याय, पुण्यवर्धक पाठ—भक्तामर, तत्त्वार्थसूत्र सहस्रनामका पाठ करना चाहिये, पीछे घर आकर शुद्ध कपड़े पहिनकर अपने हाथसे रसोई आदि बनाना चाहिये, पानी दोहरे गाढ़े छन्नेसे छानना चाहिये और सब घरवालोंको प्रसन्नतापूर्वक भोजन कराना चाहिये। कोई अपने घरपर अतिथि आ जावे तो उसको भी भोजन प्रीतिके साथ कराना चाहिये, पीछे स्वयं भोजन करना चाहिये। चौकाकी क्रिया समाप्त होनेपर दूसरे दिन काममे आनेवाली भोज्यसामग्री चुगना चाहिये, समय बचे तो सीना-पिरोना आदि काम करना चाहिये। संध्या पश्चात् मन्दिरजीमें दर्शन करनेके लिये जाना चाहिये और वहां सभाका शास्त्र सुनना चाहिये। पीछे सबोंको सुलाकर स्वयं सोना चाहिये। सोनेके पहिले शुद्धमना होकर एक माला णमोकार मन्त्रकी पढ़कर सोना चाहिये।

यह संक्षेपमें हमारी बहिनोंकी दिनचर्या है। प्रार्थना है कि हमारी बहिन स्वकर्तव्य और दिनचर्याका ठीक-ठीक पालन करेंगीं।

निवेदक—

श्रीनिवास जैन शास्त्री, कलकत्ता









श्रीजिनाय नमः



अभिषेक पूजा-संग्रह

महाभिषेक-पाठ

सौगंध्यसंगतमधुव्रतझंकृतेन, संवर्ण्यमानमिव गंधमनिंद्यमादौ ।
आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवंद्यं, पादारविंदमभिवंद्य जिनोत्तमानां ।१।
ओं ह्रीं गंधं आरोपयामीति स्वाहा ।

प्रोत्फुल्लनीलकुलिशोत्पलपद्मराग, निर्जत्करप्रकरवंधसुरेन्द्रचापं ।
जैनाभिषेकसमयेंगुलिपर्वमूले, रत्नांगुलीयकमहं विनिवेशयामि ॥२॥

ओं ह्रीं रत्नमुद्रिकां, अवधारयामीति स्वाहा ।

सम्यग्पिनद्धनवनिर्मलरत्नपंक्ति-रोचिर्बृहद्वलयजातबहुप्रकारं ।
कल्याणनिर्मितमहं कटकं जिनेश-पूजाविधानललिते स्वकरे करोमि ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं कंकणं अवधारयामीति स्वाहा ।

पूर्वं पवित्रतरसूत्रविनिर्मितं यत्, प्रीतः प्रजापतिरकल्पयदंगसंगि ।
सद्भूषणं जिनमहे निजकण्ठधार्य्यं, यज्ञोपवीतमहमेष तदाऽऽतनोमि ।४।

ओं ह्रीं यज्ञोपवीत अवधारयामीति स्वाहा ।

पुन्नागचंपकपयोरुहकिंकरातजातिप्रसूननवकेशरकुंदमाद्यम् ।
देव ! त्वदीयपदपंकजसत्प्रसादात् मूद्‌र्ध्नि प्रणामवति शेखरकं दधेऽहं ॥५॥

ओं ह्रीं मुकुटं अवधारयामीति स्वाहा ।

कटकं च सूत्रत्रयकुंडलानि, केयूरहारं गजमुद्रिकां च ।

प्रालेयपाटं मुकुटस्वरूपं, स्वस्ति क्रियामेखलकर्णपूर्णं ॥६॥

ओं ह्रीं कुंडलं अवधारयामीति स्वाहा।

ये संति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता, नागाः प्रभूतबलदर्पयुता विबोधाः।
संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिं ।७।

ओं क्ष्रां क्ष्रीं क्ष्रूं क्ष्रौं क्ष्रः भूशुद्धयतु स्वाहा।

अनेन मन्त्रेण भूमि शोधन कुर्यात्।

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः, प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेकवारम्।
अत्युद्यमुद्यतमहं जिनपादपीठं प्रक्षालयामि भवसंभवतापहारि ॥८॥

पीठप्रक्षालनं करोमीति स्वाहा।

इन्द्राग्निदण्डधरनैर्ऋतपाशपाणि-वायूत्तरेणशशिमौलि फणीन्द्रचंद्राः।
आगत्य यूयमिह सानुचराः साचिन्हाः, स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं जिनपाभिषेके।

ॐ इन्द्राय स्वाहा, ॐ अग्नये स्वाहा, ॐ यमाय स्वाहा, ॐ नैऋत्याय स्वाहा, ॐ वरुणाय

स्वाहा, ॐ पवनाय स्वाहा, ॐ धनदाय स्वाहा, ॐ ईशानाय स्वाहा, ॐ धरणेंद्राय स्वाहा, ॐ सोमाय स्वाहा। यह पढ़कर दश दिशाओंमें अर्घ देना चाहिये

अत्युग्रतारतरमौक्तिकचूर्णवर्णैर्भृंगारनालमुखनिर्गतचारुधारैः।
शीतैः सुगन्धिभिरतीव जलैर्जिनेन्द्रबिंबोत्सवस्नपनमेष समारभेऽहम् ।९।

ओं ह्रीं जलेन स्नपनं करोमीति स्वाहा (इति प्रतिज्ञा)

दध्युज्वलाक्षतमनोहरपुष्पदीपैः, पात्रार्पितैः प्रतिदिनं महतादरेण।
त्रैलोक्यमंगल ! सुखालय ! कामदाह-मारार्तिकं तव विभोरवतारयामि
॥ १० ॥

ओं ह्रीं मंगलार्तिकावतरणं करोमीति स्वाहा।

पुण्याहमद्य सुमहांति च मंगलानि, सर्वे प्रहृष्टमनसश्च भवंतु भव्याः।
पुण्योदकेन भगवंतमनंतकांतिमर्हंतमुज्वलतनुं परिवर्तयामि ॥११॥

ओं ह्रीं पुण्योदकावतरणम् करोमीति स्वाहा।

नाथ! त्रिलोकमहिताय दशप्रकार-धर्माम्बुवृष्टिपरिषिक्तजगत्त्रयाय।

अर्घं महार्घगुणरत्नमहार्णवाय तुभ्यं ददामि कुसुमैर्विशदाक्षतैश्च ।१२।

ओं ह्रीं अर्घावतरणम् करोमीति स्वाहा ।

(जहां भगवान विराजमान हों वहां जाकर अर्घ चढ़ाना चाहिये)

जन्मोत्सवादिसमयेषु यदीयकीर्तिं, सेन्द्राः सुराः प्रमदभारनताः स्तुवंति । तस्याग्रतो जिनपतेः परया विशुद्ध्या पुष्पांजलिं मलयजार्द्रमुपाक्षिपेऽहं

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

यं पांडुकामलशिलागतमादिदेव-मस्नापयन्सुरवराः सुरशैलमूर्ध्नि ।

कल्याणमीप्सुरहमक्षततोयपुष्पैः, संभावयामि पुर एव तदीयबिंबम् ।१४।

ॐ ह्रीं श्रीअरहंतदेव ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं श्रीअरहंतदेव ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं श्रीअरहंतदेव ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम् ॥

सत्पल्लवार्चितमुखान्कलधौतरूप्यान्, ताम्रारकूटघटितान्पयसा सुपूर्णान्

संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान् संस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकांते ।

(कलशस्थापनम्)

(चार दिशाओंमें जलसे पूर्ण स्वस्तिक लगे हुये कलश स्थापन करना)

वार्भिः पुण्यैरगण्यैर्गुणगरिमवितांश्चंदनेनाक्षतौघैः,
दिव्यैरेभिः प्रसूनैरतिसुरभितरैः शुद्धसान्नाह्यवर्षैः ।
दीपैर्धूपैरनेकैरतिवहलमहागंधवद्भिः समुद्भिः,
नानानामानिरूढैरिह फलबहुभिरर्चयेत्स्वर्णकुंभान् ॥ १६ ॥

कुंभार्चनं करोमीति स्वाहा (चारों कलशोंके नीचे १-१ अर्घ देना)

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटी-संलग्नरत्नकिरणच्छविधूसरांघ्रिम् ।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टैर्भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिंचे ॥१७॥

ओं ह्रीं श्रीअर्हंतं भगवंतं कृपालुसंतं वृषभादिवीरपर्यंतं जिनाभिषेकसमये आद्ये आद्ये जंवूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यावर्ते पुण्यक्षेत्रे…… नगरे मासोत्तम-मासे पक्षे ..पर्वणि ..

वासरे क्षुल्लकक्षुल्लिकानां श्रावकश्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं जलेन अर्चयामीति स्वाहा जल धारा दीयते ॥

(यह मंत्र पढ़कर भगवानके ऊपर शुद्ध जलकी धारा देना चाहिये)

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले, जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा । यह पढ़कर अर्घ चढ़ाना चाहिये ।

उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिराम-देहप्रभावलयसंगमलुप्तदीप्तिम् ।
धारां घृतस्य शुभगंधगुणानुमेयां वन्देऽर्हतां सुरभिसंस्नपनोपयुक्ताम् ॥

गाथा—जो घियकंचणवण्णदुइ जिणण्हावे धरि भाव ।
सोदुग्गयगइ अघहरइजम्मनदुक्कइपाव ॥ घृतस्नपनम् ॥

ऊपर लिखे अनुसार मंत्र संकल्पको बोलकर शुद्ध घृतकी धारा भगवानके ऊपर चढ़ाना चाहिये । पीछे "उदकचंदन" आदि बोलकर ऊपर लिखे अनुसार अर्घ चढ़ाना चाहिये ।

संपूर्णशारदशशांकमरीचिजाल-स्यंदैरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहैः ।
क्षीरैर्जिनाः शुचितरैरभिषिंच्यमानाः, संपादयन्तु मम चित्तसमीहितानि॥
गाथा--दुद्धहि जिणवर जो ण्हवइ मुत्ताहलधवलेण । सो संसार न संभवइ मुच्चइ पावमलेण ॥ दुग्धस्नपनम् ॥ 'उदकचंदन' इत्यादि अर्घं ॥
दुग्धाब्धिवीचिचयसंचितफेनराशि-पांडुत्वकांतिमवधारयतामतीव ।
दध्नां गता जिनपतेः प्रतिमां सुधारा, सम्पद्यतां सपदि वांछितसिद्धये वः॥
गाथा दुद्धझड़ाझड़ उत्तरइ दड़वड़दहीपडंत । भावियह मुच्चइ कलिमलह जिणदिट्ठउ वीसंत ॥दधिस्नपनम्॥ 'उदकचंदन' इत्यादि अर्घं ॥
भक्त्याललाटतटदेशनिवेशितोच्चैः, हस्तैश्च्युताः सुरवराऽसुरमर्त्यनाथैः।
तत्कालपीलितमहेक्षुरसस्य धारा, सद्यः पुनातु जिनबिम्बगतैव युष्मान्॥
इक्षुरसस्नपनम् ॥ 'उदकचंदन' इत्यादि अर्घं ॥
संस्नापितस्य घृतदुग्धदधीक्षुवाहैः, सर्वाभिरौषधिभिरर्हतमुज्वलाभिः ।

उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेकमेलाकालेयकुंकुमरसोत्कटवारिपूरैः ॥
गाथा--रसदुद्धदही पाणीय जो जिणवर ण्हावे। भव संकल तोडेवि-
कल अचल सुक्ख पावेइ ॥ सर्वौषधिस्नपनम् ॥ 'उदकचंदन' इत्यादि
द्रव्यैरनल्पघनसारचतुःसमाद्यैरामोदवासितसमस्तदिगंतरालैः ।
मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुंगवानां त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि ॥
गंधोदकस्नपनं ॥ 'उदकचंदन' इत्यादि अर्घं ॥
इष्टैर्मनोरथशतैरिव भव्यपुंसां पूर्णैः सुवर्णकलशैर्निखिलावसानैः ।
संसारसागरविलंघनहेतुसेतुमाप्लावये त्रिभुवनैकपतिं जिनेंद्रम् ॥
श्रीमन्नीलोत्पलामोदैराहूता भ्रमरोत्कटैः । गंधोदकैर्जिनेन्द्रस्य पादा-
भ्यर्चनमारभे ॥ इति जलधारास्नपनम् ॥

यहांपर मंगल बोलकर अभिषेक करनेके जितने भी कलश हों उन सबसे भगवानका अभि-
षेक करना चाहिये ।

निर्मलं निर्मलीकरणं पावनं पापनाशनम् ।
जिनगंधोदकं बन्दे चाष्टकर्मविनाशनम् ॥

अथाष्टकम् ।

सद्गंधतोयैः परिपूरितेन श्रीखंडमाल्यादिविभूषितेन ।
पादाभिषेकं प्रकरोमि भूत्यै भृंगारनालेन जिनस्य भक्त्या ॥

ओं ह्रीं चतुर्विंशतिजिनवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा ।

काश्मीरपंकहरिचंदनमारसांद्रनिस्यंदनादिरचितेन विलेपनेन । अभ्याजसौरभतनौः प्रतिमां जिनस्य संचर्चयामि भवदुःखविनाशनाय ।चंदनं।
तत्कालभाक्तिसमुपार्जितसौख्यबीजपुण्यात्मरेणुनिकरैरिव संगलद्भिः ।
पुंजैः कृतैः प्रतिदिनं कलमाक्षतौघैः पूजां पुरो विरचयामि जिनाधिपानां
॥ अक्षतम् ॥

अंभोजकुंदवकुलोत्पलपारिजातमंदारजातिविदलन्नवमल्लिकाभिः ।
देवेंद्रमौलिविरजीकृतपादपीठं भक्त्या जिनेश्वरमहं परिपूजयामि॥पुष्पं॥
अत्युज्वलं सकललोचनहारि चारुनानाविधाकृतिनिवेद्यमनिंद्यगंधं ।
वाष्पायमानमनणीयसि हेमपात्रे संस्थापितं जिनवराय निवेदयामि ।नैवेद्यं
निष्कज्जलस्थिरशिखाकलिकाकलापैर्माणिक्यरश्मिशिखराणि विडंबयद्भिः
सर्पिभिरुज्वलविशालतरावलोके दीपैर्जिनेंद्रभवनानि यजे त्रिसंध्यं।दीपम्
कर्पूरचंदनतरुष्कसुरेन्द्रदारु कृष्णागुरुप्रभृतिचूर्णविधानसिद्धम् ।
नासाक्षिकंठमनसां प्रियधूमवर्तिं धूपं जिनेंद्रमभितो बहुमुत्क्षिपेऽहम् । धूपं
वर्णेन यानि नयनोत्सवमावहन्ति, यानि प्रियाणि मनसो रससंपदा च ।
गंधेन सुष्ठु रमयंति च यान्ति नासां, तैस्तैः फलैर्जिनपतेर्विदधामि
पूजां ॥ फलं० ॥
एंव यथाविधिमनागपि यः सपर्यामर्हंस्तव स्तवपुरःसरमातनोति ।

कामं सुरेन्द्रनरनाथसुखानि भुंक्त्वा मोक्षं तमप्यभयनंदि पदं स याति ॥ अर्घं ॥

वृषभोऽजितनामा च संभवश्चाभिनन्दनः । सुमतिः पद्मभासश्च सुपार्श्वो जिनसत्तमः ॥ १ ॥ चन्द्राभः पुष्पदन्तश्च शीतलो भगवान्मुनिः । श्रेयांस वासुपूज्यश्च विमलो विमलद्युतिः ॥ २ ॥ अनन्तो धर्मनामा च शांतिः कुन्थुर्जिनोत्तमः । अरश्च मल्लिनाथश्च सुव्रतो नमितीर्थकृत् ॥ ३ ॥ हरिवंशसमुद्भूतोऽरिष्टनेमिर्जिनेश्वरः । ध्वस्तोपसर्गदैत्यारिः पार्श्वो नागेन्द्रपूजितः ॥ ४ ॥ कर्म्मान्तकृन्महावीरः सिद्धार्थकुलसंभवः । एते सुरासुराघेण पूजिता विमलत्विषः ॥ ५ ॥ पूजिता भरताद्यैश्च भूपेन्द्रैर्भूरिभूतिभिः । चतुर्विधस्य संघस्य शांतिं कुर्वन्तु शाश्वतीं ॥ ६ ॥ जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिः सदाऽस्तु मे । सम्यक्त्वमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ७ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः श्रुते भक्तिः सदाऽस्तु मे ।
सज्ज्ञानमेव संसारवारणं मोक्षकारणम् ॥ ८ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिर्गुरौ भक्तिः सदास्तु मे ।
चारित्रमेव संसारवारणं मोक्षकारणं ॥ ९ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण करना)

जयमाल ।

श्रीमत्श्रीजिनराजजन्मसमये इन्द्रैश्चहर्षैर्युतैः इन्द्राणीपरिवारभृत्यसाहितैः देवांगना नृत्यकैः । नानागीताविनोदमंगलविधौ पूजा च मेरौ कृता जलगंधाक्षतपुष्पचारुचरुभिः दीपैश्च धूपैः फलैः ।

छंद-जन्म जिनराजको जबहिं निज जानियों इन्द्रधरणींद्र सुर सकल अकुलानियों । देवदेवांगना चलिउ जय कारती । साचिय सुरपति

सहित करहिं जिन-आरती ॥२॥ साजि गजराज हरि लक्ष योजन तने वदनशतवदन प्रतिदंतवसु सोहने। सजलभरिपूर प्रतिदंत सरसोहती। सचियसुरपति सहित करहिं जिन-आरती ॥३॥ सरहि सर पंच द्वै इक कमालिनी बनी तासु प्रतिकमल पच्चीस शोभा बनी। कमलदल एकसौ आठ विस्तारती। साचिय० ॥४॥ दलहिं दल अपछरा· नाचही भावसों करहिं सांगीत जयकार सुर रागसौं, ताथ्र तत थेइ थेइ कराति पग ढारती। साचिय० ॥ ५ ॥ तासु करि बैठि हरि सकल परिवारसों, देहिं परदाच्छिना जिनहिं जयकारसों। आनिकर साचिय जिननाथ उद्धारती ॥साचि० ॥६॥ आनि पांडुकाशिला पूर्वमुख थापि जिन, करहिं अभिषेक जो इन्द्र उत्साहसों। अधिक तिन देखि प्रभु कोटि छबि वारती ॥ साचि० ॥७॥ योजन आठ गंभीर कलसा बने, चारि चौडाइमुख एक जोजन तनैं। सहस अट्ठोत्तरे कलस शिर

ढारती ॥ साचि० ॥८॥ छत्रमणिखचित ईशान शिर धारती, सनत-माहेन्द्र दोऊ चमर शिरढारती। देवदेवी सुपुष्पांजली डारती॥ साचि० ॥९॥ जल सुचंदन अक्षत पुष्पचरु लै धरै। दीप अरु धूप फल अर्घ पूजा करै। पांडुका और नीरांजना वारती। साचि० ॥१०॥ कियो शृंगार सब अंग सम्माजको, आनि मातहि दियो फेरि जिनराजको॥ तृप्त नहिं होत दृग रूप नीहारती ॥ साचि० ॥११॥ तालमिरदंगध्वनिसप्त-स्वरबाजही। नृत्य तांडव करत इन्द्र अति छाजही। करत नृत्य उत्साहसौं जिनसुअग्रपगढारती ॥साचि०॥१२॥ भव्यजनलोकजन्म-नमहोच्छो करैं, आगिले जन्मके सकल पातक हरैं। भक्तिजिनराजकी पारउत्तारती। साचिय सुरपाति सहित करहिं जिन आरती ॥१३॥

घत्ता-जिणवरवरमाता, माननीया सुरैन्द्रैः ।
स जयति जिनराजा, लालचन्दं विनोदी ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादितीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा

(इत्याशीर्वादः । पुष्पांजलिं क्षिपेत्) पश्चात् शान्ति विसर्जन करके प्रतिमाजीको जहांसे लाये हों वहां विराजमान कर देना चाहिये ।

मंगल पाठ

पणविवि पंच परमगुरु, गुरु जिनसासनो । सकलसिद्धिदातार सु, विघन विनासनो ॥ सारद अरु गुरु गौतम, सुमति प्रकासनो । मंगल-कर चउ-संघहिं, पापपणासनो ॥१॥ पापहिंपणासन गुणहिं गरुवा, दोष अष्टादश-रहिउ । धरि ध्यान करमविनासि केवल,-ज्ञान अविचल जिन लहिउ ॥ प्रभु पंचकल्याणक विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं । त्रैलोकनाथ सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ २ ॥

-गर्भकल्याणक—

जाके गरभकल्याणक, धनपति आइयो । अवधिज्ञान-परिमान, सु इंद्र पठाइयो ॥ रचि नव बारह जोजन, नयरि सुहावनी । कनकरयण-मणिमंडित, मंदिर अति बनी ॥ ३ ॥ अति बनी पौरि पगार परिखा सुवन उपवन सोहए । नर नारि सुंदर चतुरभेख सु, देख जनमन मोहए ॥ तहँ जनकगृह छहमास प्रथमहिं, रतनधारा बरसियो । पुनि रुचिकवासिनि जननि-सेवा करहिं सब विधि हरसियो ॥ ४ ॥ सुरकुंजरसम कुंजर, धवल धुरंधरो । केहरि केसरशोभित, नखसिख सुंदरो ॥ कमलाकलस-न्हवन, दुइदाम सुहावनी । रविससिमंडल मधुर, मीन जुग पावनी ॥५॥ पावनी कनक घट जुगम पूरन, कमलकलित सरोवरो । कल्लोलमालाकुलित सागर, सिंहपीठ मनोहरो ॥ रमणीक अमरविमान फणिपति-भुवन रवि छबि छाजई । रुचि रतनरासिदिपंत

दहन सु, तजपुज बिराजईं ॥ ६ ॥ ये सखि सोरह सुपने सूती सयनहीं । देखे माय मनोहर, पच्छिम रयनहीं ॥ उठि प्रभात पिय पूछियो अवधि प्रकासियो । त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहँ भासियो ॥७॥ भासियो फल तिहिं चिंति दंपति, परम आनंदित भये । छह मासपरि नवमास पुनि तहँ, रैन दिन सुखसों गये ॥ गर्भावतार महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं । भणि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावहीं ॥ ८ ॥

जन्मकल्याणक—

मतिश्रुतअवधिविराजित, जिन जब जनमियो । तिहुँलोक भयो छोभित सुरगन भरमियो ॥ कल्पवासिघर घंट, अनाहद बज्जियो । जोतिषघर हरिनाद, सहज गल गज्जियो ॥ ९ ॥ गज्जियो सहजहि संख भावन,-भुवन सबद सुहावने । विंतरनिलय पटु पटह बज्जहिं

कहत महिमा क्यों बने ॥ कंपित सुरासन अवधिबल जिन,-जनम निहचै जानियो । धनराज तब गजराज मायामयी निरमय आनियो ॥ १० ॥ जोजन लाख गयंद, वदन-सौ निरमये । वदन वदन वसु दंत, दंत सर संठए ॥ सर सर सौ पनवीस, कमलिनी छाजहीं । कमलिनि कमलिनि कमल, पचीस विराजहीं ॥ ११ ॥ राजहीं कमलिनी कमलऽठोतर, सौ मनोहर दल बने । दलदलहिं अपछर नटहिं नवरस, हावभाव सुहावने ॥ मणि कनककिंकाणि वर विचित्र, सु अमर मंडप सोहए। घन घंट चमर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहए॥१२॥ तिहिं करि हरि चढ़ि आयउ, सुरपरिवारियो । पुरहि प्रदच्छन दे त्रय, जिन जयकारियो ॥ गुप्त जाय जिनजननिहिं, सुखनिद्रा रची । मायामइ सिसु राखि तौ, जिन आन्यो सची ॥ १३ ॥ आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपत न-हूजिये । तब परम हरषित, हृदय

हरिने सहस लोचन पूजिये ॥ पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इंद्र, उच्छंग धरि प्रभु लीनऊ। ईसानइन्द्र सु चन्द्रछबि सिर, छत्र प्रभुके दीनऊ ॥ १४ ॥ सनतकुमार महेंद्र, चमर दुइ ढारहीं। सेस सक्र जयकार सबद उच्चारहीं ॥ उच्छव सहित चतुरविधि, सुर हरषित भये। जोजन सहस निन्यानवै, गगन उलंघि गये ॥१५॥ लँघि गये सुरगिरि जहां पांडुक,-वन विचित्र विराजहीं। पांडुकसिला तहँ अर्धचन्द्रसमान, मणि छबि छाजहीं ॥ जोजन पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊंची गनी। वर अष्ट-मंगल, कनक कलसनि सिंहपीठ सुहावनी ॥१६॥ रचि मणिमंडप सोभित मध्य सिंहासनो। थाप्यो पूरब मुख तहँ, प्रभु कमलासनो ॥ बाजहिं ताल मृदंग, वेणु वीणा घने। दुंदुभि प्रमुख मधुरधुनि, अवर जु बाजने ॥१७॥ बाजने बाजहिं सची सब मिलि, धवल मंगल गावहीं। पुनि करहिं नृत्य सुरांगना सब देव कौतुक

धावहीं ॥ भरि छीरसागर जल जु हाथहिं, हाथ सुर गिरि ल्यावहीं। सौधर्म अरु ईशानइंद्र सु कलस ले प्रभु न्हावहीं ॥१८॥ वदन-उदर अवगाह कलसगत जानिये। एक चार वसु जोजन, मान प्रमानिये॥ सहस अठोत्तर कलसा, प्रभुके सिर ढरे। पुनि सिंगार प्रमुख, आचार सबै करे ॥१९॥ करि प्रगट प्रभु महिमामहोच्छव, आनि पुनि मातहिं दयो। धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गयो॥ जनमाभिषेक महंत महिमा, सुनत सब सुख पावहीं। भणि 'रूपचंद' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावहीं ॥ २० ॥

अन्तिम मंगल गीत

मैं मतिहीन भगतिवस, भावन भाइया। 'मंगलगीतप्रबंध' सु जिनगुण गाइया ॥ जो नर सुनहिं, बखानहिं सुर धरि गावहीं ॥ मनवांछित फल सो नर निहचै पावहीं ॥ ४९ ॥ पावहीं आठों सिद्ध

नवनिधि, मन प्रतीत जो लावहीं ॥ भ्रमभाव छूटै सकल मनके निज स्वरूप लखावहीं ॥ पुनि हरहिं पातक टरहिं विघन, सु होहिं मंगल नित नये । भणि 'रूपचंद' त्रिलोकपति जिनदेव चउसंघहि नये ॥ ५० ॥

नित्य-नियम-पूजा

ओं जय जय जय । नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरीयाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ ओं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः ।

चत्तारि मंगलं—अरहंतमंगलं, सिद्धमंगलं, साहुमंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा—अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारिसरणं पव्वज्जामि—अरहंतसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहुसरणं

पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मोसरणं पव्वज्जामि ॥ ओं नमोऽर्हते स्वाहा।

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा। ध्यायेत्पञ्चनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१॥ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यंतरे शुचिः ।२। अपराजितमंत्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः। मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः ॥३॥ एसो पंचणमोयारो सव्वपावप्पणासणो। मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होइ मंगलं ॥४॥ अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः। सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् ॥५॥ कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम्। सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥६॥ विघ्नौघाः प्रलयं यांति शाकिनीभूतपन्नगाः। विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥७॥

उदकचंदनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥८॥

ओं ह्रीं श्रीभगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं, स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम् । श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतु-जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि ।

स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुंगवाय, स्वस्तिस्वभावमहिमोदयसुस्थिताय । स्वस्तिप्रकाशसहजोर्ज्जितदृङ्मयाय, स्वस्तिप्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥ स्वस्त्युच्छलद्विमलबोधसुधाप्लवाय, स्वस्तिस्वभावपरभावविभासकाय । स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय, स्वस्ति त्रिकालसकलायतविस्तृताय । द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः । आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन् भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञम् । अर्हन्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव । अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवलबोधवह्नौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥

श्रीवृषभो नः स्वास्ति, स्वस्ति श्रीअजितः । श्रीसंभवः स्वस्ति,

स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः। श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः। श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः। श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशीतलः। श्रीश्रेयान् स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः। श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्तः। श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः। श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः। श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः। श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः। श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः।

(पुष्पांजलि क्षिपेत्)

नित्याप्रकम्पाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनः पर्य्ययशुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १ ॥

(पुष्पांजलि क्षेपण—आगे प्रत्येक श्लोकके अन्तमे पुष्पांजलि क्षेपण करना चाहिये)

कोष्ठस्थधान्योपममेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥२॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादनघ्राणविलोकनानि ।
दिव्यान्मतिज्ञानबलाद्वहंतः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ३ ॥
प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः ।
प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ४ ॥
जङ्घावलिश्रेणिफलाम्बुतन्तुप्रसूनबीजाङ्कुरचारणाह्वाः ।
नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ५ ॥
अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्निशक्ताः कृतिनो गरिम्णि ।
मनोवपुर्वाग्बलिनश्चनित्यं स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ६ ॥
सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः ।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ७ ॥
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः ।
ब्रह्मापरं घोरगुणाश्चरन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ८ ॥

आमर्षसर्वौषधयस्तथाशीर्विषंविषादृष्टिविषंविषाश्च ।
सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ ९ ॥
क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो मधु स्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः ।
अक्षीणसंवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ॥ १० ॥

इति परमर्षि स्वस्तिमङ्गलविधानं ।

देव-शास्त्र-गुरु-पूजा

(रचयित्री—श्रीमती जयनेमी देवी, श्रीमती सुशीला देवी)

स्थापना

दोष अठारह रहित महन्त नमो अरहंत सदा सुखदाई ।
कलिमल नाशक ज्ञान प्रकाशक श्री सिद्धान्त नमो हरषाई ।
गुरु निर्ग्रंथ नमूँ शिवपंथ मनो वच काय त्रिशुद्धि लगाई ।
हे त्रय रत्न ! जजूँ कर यत्न यहाँ अब तिष्ठहु शीघ्र हि आई ॥

ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट्। इत्याह्वाननम्
ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। इति स्थापनम्
ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। इति सन्निधीकरणम्

अष्टक—

चाल—नंदीश्वराष्टक (द्यानतराय कृत) के समान

उज्ज्वल जल प्राशुक लाय, भरि कंचन झारी।
प्रभु धार देत हरषाय, मन आनँद कारी।
अरहंत सुगुरु जिनवाणि, पद पूजा करती।
वसु कर्म नशैं दुख खानि, मनवांछा धरती॥

ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिर घसि घनसार, चरणनको चरचूँ।
मम भव आताप निवार, चन्दन मिस अरचूँ॥ अरहन्त०॥

ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ता सम अक्षत सार, कंचन थार भरूँ।
त्रय पुंज धरूँ जिनराज अक्षय-पद सु वरूँ ॥ अरहन्त० ॥
ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

जूही बेलादिक फूल, लाई साज विभो!
मेटो मनमथ मद-शूल, आई आज प्रभो ॥ अरहन्त० ॥
ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु विध पक्वान्न बनाय, तुम आगे धारी।
प्रभु क्षुधा-रोग मिट जाय, आकुलता भारी ॥ अरहन्त० ॥
ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय चरुं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग दीपककी ज्योति, हर्षित हो बारी।
कर केवलज्ञान उद्योत, कर्मोंसे हारी ॥ अरहन्त० ॥
ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

उठती धूवेंकी पाँति, चहुँ दिशिमें भ्रमकर ।
वसु कर्म खिरें इस भाँति, खेऊं धूप प्रखर ॥ अरहन्त० ॥
ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

तुम शिवफल दाता देव, फल लेकर ध्याऊं ।
धरि भक्ति करूं पद सेव, भवदधि तर जाऊं ॥ अरहन्त० ॥
ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

वसु द्रव्य साजि हिमथार, बहुविधि गुण गाती ।
रिपु अष्ट कर्म कर क्षार, अविचल पद पाती ॥ अरहन्त० ॥
ओं ह्रीं श्रीदेवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

देव शास्त्र गुरु रत्नकी, वरणूं शुभ जयमाल ।
अखिल अचिन्त्य अकथ गुणी, करिये कृपा दयाल ॥

छन्द पद्धरि

जय जय जय जय अरहन्त देव। सुर नर मुनि गण पद करत सेव॥
जय चार घातिया नाश कीन। तब केवल गुण प्रगट्यो नवीन॥१॥
जय सकल ज्ञेय ज्ञायक प्रत्यक्ष। स्वातमरस अनुभवमें सुदक्ष॥
जय समवशरण रचना विशाल। जहँ सुर नर पशु सबही निहाल॥२॥
जय शिवपथ दरसायो महान। निरखत शिवपुर पहुंचे सुजान॥
जय चौंतिस अतिशय सहित नाथ। हैं प्रातिहार्य वसु साथ साथ॥३॥
जय दिव्यध्वनि मागधि खिरंत। चहुंदिशि तुम अनुपम छबि लखंत॥
जय सप्तभंग वाणी रसाल। द्वादश विधि गणधर गूंथमाल॥४॥
जय मोह तिमिर नाशन प्रवीन। करुणामय धर्म प्रकाश कीन॥
जय जग जड़ताहारी उदार। नय स्यादवाद कीनो प्रचार॥५॥
जय द्वय विधि धर्म दिखाय भेद। श्रावक मुनि सबको हर्यो खेद॥

जय साधु धार तेरह चरित्र। क्रमशः वसु सिद्धि लहैं पवित्र ॥६॥
जय परिग्रह अन्तर बाह्य त्याग। द्वादश अनुप्रेक्षा चित्त पाग ॥
गुण आठबीस धारक महान। षट् कर्म नित्य करते सुजान ॥७॥
जग सुख विद्युत सम नाशवान। लख छोड़ा क्षणमें तृण समान ॥
जय त्रय निधि मम उर बसो आन। करती इस हेतु विनय महान ॥८॥

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

पूर्ण माल जिनदेवकी, भक्ति-भाव रसभीन।
भव-समुद्रसे काढ़िये, "शील जया" बलहीन ॥

इत्याशीर्वादः

बीस विहरमान पूजा

रोला छन्द

क्षेत्र विदेह सुमाहिं केवली नित्य विराजैं।
दर्शन करते पाप ताप संताप जु भाजैं॥
ऐसे विंशति विद्यमान भगवान पधारो।
आह्वानन मैं करूं आय भव पार उतारो॥

ओं ह्री विद्यमानविंशतितीर्थंकराः अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकराः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकराः अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

परम पावन सलिल सुलीजिये। धार जिनवर आगे दीजिये।
जनम मरण त्रिदोष मिटाइये। विद्यमान जिनेश सु ध्याइये॥

ओं ह्रीं सीमंधर-युगमंधर-बाहु-सुबाहु-संजात_स्वयप्रभ-ऋषभानन-अनतवीर्य-सूरप्रभ-विशालकीति,वज्रधर-चन्द्रानन-चन्द्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभु-वीरषेन-महाभद्र-देवयश-अजित-वीर्येति विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सरस चन्दन गंधमई घसूं । चरच जिन चरणन गुण मन लसूं ।
जगत पाप अताप नशाइये । विद्यमान जिनेश सु ध्याइये ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो भवतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

धवल शशिसम शुद्ध सुहावनो । अमल अक्षत-पुंज लुभावनो ।
अतुल अक्षयपद जिम पाइये । विद्यमान जिनेश सु ध्याइये ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

कमल कुसुम सुवासित केतकी । मदनमद भंजन हित भेटको ॥
प्रबल काम-व्यथा विनशाइये । विद्यमान जिनेश सु ध्याइये ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

शक्ति अल्प सुभक्ति विशेष है । भूख नाशन हेत संदेश है ॥
हे जिनेश ! क्षुधादि नशाइये । विद्यमान जिनेश सु ध्याइये ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कनक दीपक जगमग जगमगै । जजत जिनवर मोह तिमिर भगै ।
नाथ ! केवल-ज्योति जगाइये । विद्यमान जिनेश सुध्याइये ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

करम अष्ट प्रबल बैरी महा । अब न जात दुसह दुख यह सहा ॥
धूप खेऊं दुक्ख जलाइये । विद्यमान जिनेश सु ध्याइये ।
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सेव दाडिम श्रीफल चावसे । भक्ति भेट धरूं भरि भावसे ॥
भ्रमण भवके शीघ्र मिटाइये । विद्यमान जिनेश सु ध्याइये ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फलादिक द्रव्य सुपावना । पद अनर्घ्य मिले मन भावना ॥
परम पावन पद पहुँचाइये । विद्यमान जिनेश सु ध्याइये ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ जयमाला

दोहा—

धनुष पांचसै तन महा, विद्यमान जिनराज।
तिनके गुण वरणन करूं, वेग सुधारो काज ॥

पद्धरि छन्द—

जय सीमंधर स्वामी महान। जय जुगमंधर नामी सुजान ॥
जय बाहु जिनेश्वर बाहु वीर। जय जय सुबाहु भव हरत पीर ॥१॥
जय संजातक प्रभु जीत काम । जय स्वयंप्रभू पायो सुधाम ॥
जय बृषभानन तुम गुण गँभीर। जय नन्तवीर्य प्रभु वीर धीर ॥२॥
जय सूरप्रभु हनि अष्ट कर्म। जय जय विशालकृत हर्‍यो भर्म ॥
जय वज्राधर धरि शुक्लध्यान। जय चन्द्रानन जिन मोह हान ॥३॥
जय चन्द्रबाहु शीतल प्रकाश। जय जय भुजंग हरि कर्म्म पाश ॥
जय ईश्वर विघ्न विनाशवन्त। जय नेमिप्रभु करि कर्म्म अन्त ॥४॥

जय वीरसेन वीरज निधान। जय महाभद्र प्रभु भद्र खान ॥
जय देव यशोधर यश धरन्त। जय अजितवीर्य जयवन्त सन्त ॥५॥
जहँ बीस तीर्थंकरको निवास। जहँ समवशरण महिमा प्रकाश ॥
जहँ बरतै काल चतुर्थ सार। तहँके वर्णनको कौन पार।
हे विद्यमान अरहंत देव। दो दर्श यही मेरी सुटेव ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा—

सूर्य करे तम नाश वैद्य रोग नाशे यथा।
'शील जया' अरदास मेटो भव भवकी बिथा ॥

इत्याशीर्वादः। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अकृत्रिम चैत्यालयोंके अर्घ

कृत्याकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकींगतान्, वन्दे भावनव्यंतरान् द्युतिवरान्कल्पामरान्सर्वगान्। सद्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैर्दीपैश्च धूपैः फलैर्नीराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां शांतये ॥१॥

ओं ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु। यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुंगवानाम् ॥ अवनितलगतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणां, वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ॥ इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां, जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥२॥ जम्बूधातकिपुष्कराद्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवाश्चन्द्राम्भोजशिखंडिकण्ठकनकप्रावृड्घनाभाजिनः। सम्यग्ज्ञानचारित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मेन्धना भूतानागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥३॥ श्रीमन्मेरौ

कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शालमली जम्बुवृक्षे वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचिके कुण्डले मानुषांके। इष्वाकारेंऽजनाद्रौदधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥४॥

द्वौ कुन्देन्दुतुषारहारधवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ द्वौ बंधूकसमप्रभौ जिन-वृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ। शेषाः षोडशजन्ममृत्युरहिताः संततहेमप्रभा-स्ते संज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥५॥ नोकोडिसया पणवीसा तेपणलक्खाण सहससत्ताईसा। नौसेते पडियाला जिणप-डिमा किट्टिमा बंदे ॥६॥

ओं ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धिअकृत्रिमचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इच्छामि भंते—चेइयभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अह-लोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचे-याणि ताणि सव्वाणि। तीसुवि लोएसु भवणवासियवाणविंतरजोय-

सियकप्पवासयात्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति । अहमवि इह संतो तत्थसंताइ णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

इत्याशीर्वादः । (पुष्पाजलिं क्षिपेत्)

अथ पौर्वाह्निकमाध्याह्निकआपराह्निकदेववंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावंदनास्तवसमेतं श्रीपंचमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(णमोकार मन्त्रका नौ बार जाप करना)

जप करते समय आठ दिशाओंमें आठ पाखुड़ी (दल) वाले हृदयकमलकी मनमें कल्पना करनी चाहिये। फिर उन पाखुड़ी और कर्णिकाके बीचमें प्रत्येकपर पहिले उच्छ्वासमें 'णमो अरहताण णमो सिद्धाण' ये दो पद

दूसरे उच्छ्‌वासमे 'णमो आइरीयाणं णमो उवज्झायाणं' ये दो पद और तीसरे उच्छ्‌वासमें 'णमो लोए सव्वसाहूण' यह एक पद उच्चारण करना चाहिये, इस तरह सत्ताईस उच्छ्‌वासमे नौ बार जाप देना उचित है)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरीयाणं। णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ (तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि)

सिद्ध-पूजा

स्थापना

अष्ट कर्म कर नष्ट सिद्ध शिवथान विराजैं।
जहां महन्त अनन्त सन्त भगवन्त सुछाजैं।
श्री गुणवन्त नमूं शिवकन्त मुकतिपद काजैं।
तिष्ठ तिष्ठ हे देव सेव करते अघ भाजैं ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक—

अचल निज सुखमें रमते सदा। जनम मरण त्रिदोष भये विदा ॥
सलिल पावन भृंग भराइके। सकल सिद्ध जजूं चित लाइके ॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जगत ताप अताप नशाइया। सहज शीतल समरस पाइया ॥
अति सुगन्ध सुचन्द घिसाइकें। सकल सिद्ध जजूं चित लाइकें।
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

चित-स्वरूप अरूप अनूपमय। अतुल अक्षयपद चिद्रूपमय ॥
अखयपद प्रतिपुंज चढ़ाइकें। सकल सिद्ध जजूं चितलाइकें।
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

परम धाम विखंडित काम है। मदनजित शंकर अभिराम है ॥
शूल नाशक फूल चुनाइके। सकल सिद्ध जजूं चित लाइके।
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

विन अहार बिहार निहार हैं। अकल अलख सुगुण विस्तार हैं ॥
क्षुधा हारन चरु सु चढ़ाइके। सकल सिद्ध जजूं चित लाइके।
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुद्रोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म मूरति अनुपम छबिमई। तिमिर मोह विनाशक गुणमई ॥
कनक दीपक ज्योति जगाइकें। सकल सिद्ध जजूं चितलाइकें ॥
ओं ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा।

करम अष्ट सु नष्ट भये सभी। जग शरीर विनष्ट हुए तभी ॥
अगर धूप दशांग जलाइकें। सकल सिद्ध जजूँ चितलाइकें ॥
ओं ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

गुणसुक्षायक सम्यक लीन है। तीन लोक सुलखत प्रवीण है ॥
फलसु लाईं मन हरषाइके। सकल सिद्ध जजूं चितलाइके ॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

परम आनँद कंद जिनंद हैं। जगत द्वंद निकंद सुछंद हैं ॥
पद अनर्घ्य भजूं लवलाइके। सकल सिद्ध जजूं चितलाइके ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाला

दोहा—

चिदानन्द चिद्रूपके, गुण चिन्तूं मनलाय।
जिनके चरणन चन्द्र लखि, चित चकोर विहंसाय ॥

पद्धरि छन्द—

जय सिद्ध देव महिमा निधान। जय नित्य निरंजन कर्म हान ॥
जय ज्ञानावरणी कियो हान। तब ज्ञान अनन्त लह्यो महान ॥१॥
जय दर्शनवरणी भेद नाश। फिर दरशन गुण कीनो प्रकाश ॥
जय वेदनीय हत मोक्ष थान। गुण अव्याबाध लह्यो सुजान ॥२॥
जय मोहनीय घात्यो प्रवीन। पुनि समकित गुण चित भयो लीन ॥

जय आयु कर्म हान्यो सुवीर । तब अवगाहन प्रगट्यो सुधीर ॥३॥
जय नाम कर्मकी प्रकृति टार । सूक्ष्मत्व लह्यो तब सुख अपार ॥
जय गोत्र कर्म कीनो सुक्षार । अगुरुलघु पायो आप सार ॥४॥
जय अन्तराय दीनों बिदार । वीरज अनन्त धारो अपार ॥
इम अष्ट कर्मको कियो नाश । तब सिद्ध भूमिको भयो बास ॥५॥
जय नित्य निरंजन सिद्ध थान । जय नंत चतुष्टय युत महान ॥
जय अजर अमर ज्ञायक प्रत्यक्ष । जय हान महारिपु कर्म कक्ष ॥६॥
जय भ्रम तम भंजन भानु आप । जय चन्द्र मिटायो जगत ताप ॥
जय कृत्यकृत्य शुभ कृत्य कीन । जय निज स्वरूपमें भये लीन ॥७॥
जय जन्मजरामृत रहित नाथ । नहिं रूप गंध रस वर्ण साथ ॥
जय वर्जित शोक अशोक रूप । दृग ज्ञान विलोक्यो जग स्वरूप ॥८॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

दोहा

कर्म काट शिवपुर गये, भये नित्य अविकार।
निराकार परमातमा 'शील जया' भय टार॥

इत्याशीर्वादः। (पुष्पाजलिं क्षिपेत्)

वर्तमान चतुर्विंशति जिन-पूजा

स्थापना--

वृषभादिक महाराज जगत सिरताज सुनीजे।
तुम भव जलधि जिहाज गरीबनिवाज कहीजे।
हे जिनराज विराज लाज मेरी लख लीजे।
आज सुधारहु काज नाथ! अब बांह गहीजे।

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनाः अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनाः अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनम्॥
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनाः अत्र मम सन्निहिताः भवत भवत वषट्॥

अथाष्टक—

छंद त्रिभंगी

उज्ज्वल जल लाईं भृंग भराईं वर शुचिताईं जिनराईं।
लै तुम ढिंग धाईं धार चढाईं भाव बढाईं हरषाईं॥
वृषभादि महन्ता प्रभु भगवन्ता मोह हरन्ता बलवन्ता।
शिवतियके कन्ता नमत सुसंता नाथ अनंता जगवंता॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥

चंदन गुण भारी ताप निवारी तुम ढिंग धारी मनहारी।
मन वच तन वारी हे त्रिपुरारी हो भवतारी सुखकारी॥ वृषभादि०॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत अनियारे कंचन धारे पुंज पियारे मनहारे।
पूजूं सुखकारे पदतर धारे पाप निवारे भयटारे॥ वृषभादि०॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ सुमन सुवासे दश दिशि बासे आनँद भासे उल्लासे ।
दुख काम विनाशे हो सुखजासे धरि तुम पासे इम आसे ॥ वृषभादि० ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्य कामवाणविध्वंसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा ।

पकवान नवीने स्वच्छ गहीने पावक कीने चितदीने ॥
बूँदी रस भीने थाल भरीने स्वाद रसीने लै लीने ॥ वृषभादि० ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय चरुं निर्वपामीति स्वाहा ।

मणि दीप सजाई बाति बनाई दीप जलाई चमकाई ॥
जगमग दुति छाई तिमिर नशाई आतम ज्योति मनु प्रकटाई ॥ वृष० ॥

ओं ह्री श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ धूप सँवारे पावक डारे गंध प्रसारे हितकारे ॥
चहुँ दिशि विस्तारे कर्म निवारे सन्मुख जारे प्रभु थारे ॥ वृष० ॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो दुष्टाष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनन्नास विशाला आम्र रसाला, ले तत्काला ऋतुवाला ।
त्रय योग सम्हाला हे गुणमाला, दीन-दयाला शिव-आला ॥वृषभादि०॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल वसु धारी अर्घ सँवारी, आनँदकारी अघहारी ।
ले भाजन भारी कनक मँझारी, नाथ तिहारी शरणारी ॥ वृषभादि० ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ जयमाला

दोहा

वृषभादिक चौबीस जिन, वंदूं शीश नवाय ।
बार आरती वारती, मेरी करो सहाय ॥ १ ॥

पद्धरि छन्द

जय रिषभ देव सुर करत सेव। जय अजित जीत वसु कर्म भेव ॥

जय संभव भव दुख नाश कीन। जय अभिनंदन आनंद लीन॥१॥
जय सुमति सुबुद्धि प्रकाशवंत। जय पद्म पद्म दुति तन लसंत॥
जय जय सुपास करि कर्म नाश। जय चन्द्र जगतको हर्यो त्रास॥२॥
जय पुष्पदंत पद पद्म आश। जय शीतल स्वगुण कियो प्रकाश॥
जय श्रेयनाथ तुम धवल कीर्ति। जय वासुपूज्य पूजित सुकीर्ति।३।
जय विमल वलोक्यो तीन लोक। जय जय अनंत शिव शर्म थोक॥
जय धर्म धुराधारी सुनाथ। जय शांतिनाथ करिये सनाथ॥४॥
जय कुंथु कियो वसु कर्म अंत। जय अरह अरिष्ट विनाशवन्त॥
जय मल्लि महातम मोह हान। जय मुनिसुव्रत महिमा महान॥५॥
जय नमि जिन तुम दीनन दयाल। जय नेमिनाथ नमिये त्रिकाल।
जय पारस पद परसत सुरेश। जय वीर विभूति लही अशेष॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

जयमाला जिनराजकी, गूंथी भक्ति सुफूल।
'शील जया' पग धारती, हरो भ्रमण भव शूल ॥७॥

इत्याशीर्वादः। (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अर्घ्यावलि

नोट—(जिनको पूर्ण पूजन करनेका अवकाश न हो, वे नीचे लिखे पद्य बोलकर अर्घ चढ़ावें)

श्री चौबीस तीर्थंकरोंका अर्घ

जल फल आठों शुचिसार, ताको अर्घ करों।
तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष बरों ॥
चौबीसों श्रीजिनचंद, आनँदकंद सही।
पद जजत हरत भवफंद, पावत मोक्ष मही ॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री १००८ चन्द्रप्रभ स्वामीका अर्घ

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों ।
पूजों अष्टमजिन मीत, अष्टम अवनि गमों ॥
श्रीचन्दनाथ दुतिचंद, चरनन चंद लगै ।
मन वच तन जजत अमंद, आतमजोति जगै ॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री १००८ शान्तिनाथ स्वामीका अर्घ

वसु द्रव्य सँवारी तुम ढिंग धारी, आनँदकारी दृगप्यारी ।
तुम हो भवतारी करुनाधारी, यातैं थारी शरनारी ॥
श्रीशान्तिजिनेशं नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं चक्रेशं ।
हनि अरिचक्रेशं हे गुनधेशं, दयामृतेशं मक्रेशं ॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री १००८ वासुपूज्य स्वामीका अर्घ

जलफल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई । शिवपदराज हेत हे श्रीपति ! निकट धरों यह लाई । वासुपूज वसुपूजतनुज पद, वासव सेवत आई । बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय-सनमुख धाई । जिनपद पूजों लवलाई ।

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री १००८ नेमिनाथ स्वामीका अर्घ

जलफल आदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलाय ।
अष्टमछितिके राज करनकों, जजों अंग वसु नाय ।।
दाता मोक्षके, श्रीनेमिनाथ जिनराय दाता मोक्षके ।।

ओं ह्रीं श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री १००८ पार्श्वनाथ स्वामीका अर्घ

जल आदि साजि सब द्रव्य लिया, कनथार धार नुत नृत्य किया।
सुखदाय पाय यह सेवत हों, प्रभु पार्श्व सार्श्व गुन बेवत हों ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री १००८ श्री महावीर स्वामीका अर्घ

जल फल वसु सजि हिमथार, तन मन मोद धरों।
गुण गाऊं भवदधि तार, पूजत पाप हरों ॥
श्रीवीर महाअतिवीर, सन्मतिनायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मतिदायक हो ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पंचबालयति तीर्थंकरोंके अर्घ

सजि वसुविधि दरब मनोग, अर्घ बनावतु हों।
वसुकर्म अनादि सँजोग, ताहि नशावतु हों ॥

श्रीवासुपूज्य मल्लिनेम, पारस वीर अती।
नमुँ मन वच तन धरि प्रेम, पांचों बाल जती ॥

ओं ह्रीं श्रीवासुपूज्यमल्लिनेमिपार्श्वनाथमहावीरपंचबालयतितीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

नवग्रह अरिष्ट निवारक अर्घ

जलगंध सुमन अखण्ड तन्दुल, चरु सुदीप सुधूपकं।
फल द्रव्य दूध दही सुमिश्रित, अर्घ देय अनूपकं ॥
रवि सोम भूमज सौम्य गुरु कवि, शनितमो जुत कतवे
पूजिये चौवीस जिन ग्रहऽरिष्ट नाशन हेतवे ॥

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सरस्वती देवीका अर्घ

जल चंदन अच्छत फूल चरूचत, दीप धूप अति फल लावै।
पूजाको ठानत जो तुम जानत, सो नर द्यानत सुख पावै ॥

तीर्थंकरकी धुनि गनधरने सुनि अंग रचे चुनि ज्ञानमई ।
सो जिनवर वानी शिवसुखदानी, त्रिभुवनमानी पूज्य भई ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भूत सरस्वतिदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री गुरु अर्घ

जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप कलावती ।
'द्यानत' सुगुरु पद देहु स्वामी हमहिं तार उतावली ॥
भवभोग तन वैराग्य धार निहार शिव तप तपत हैं ।
तिहुँ जगत नाथ अधार साधु सु, पूजि नित गुन जपत हैं ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री सप्तर्षि अर्घ

जल गन्ध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सुलावना ।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ कीजे पावना ।

मन्वादि चारण ऋद्धिधारक, मुनिनकी पूजा करूं।
ता करे पातिक हरे सारे सकल आनँद विस्तरूं ॥

ओं ह्रीं श्रीमन्वसुरमन्वनिचयसवसुन्दरजयवानविनयलालसजयमित्रर्षिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री षोडशकारण अर्घ

जलफल आठों दरब चढ़ाय, "द्यानत" वरत करो मन लाय।
परमगुरु हो, जयजय नाथ, परमगुरु हो।
दरशविशुद्धिभावनाभाय, सोलह तीर्थंकर पद दाय।
परमगुरु हो जयजय नाथ परमगुरु हो।

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पञ्चमेरु अर्घ

आठ दरब मय अरघ बनाय, द्यानत पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय।

पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमाको करों प्रणाम।
महासुख होय देखे नाथ परमसुख होय।

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नन्दीश्वर (अष्टाह्निक) अर्घ

यह अरघ कियो निजहेत, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीज्यो शिवखेत, भूमि समरपतु हों।
नन्दीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पुंजकरों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनँद भाव धरों॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमाभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० स्वाहा

श्री दशलक्षण अर्घ

आठों दरब सँवार, द्यानत अधिक उछाहसों।
भव आताप निवार, दस लच्छन पूजौं सदा।

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिधर्मेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री रत्नत्रय अर्घ

आठ दरब निरधार, उत्तमसों उत्तमलिये ।
जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रयभजूँ ।

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री निर्वाणक्षेत्र अर्घ

जल गंध अच्छत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं ।
'द्यानत' करो निर्भय जगतसों जोर कर विनती करौं ॥
सम्मेदगढ गिरनार चम्पा पावापुरि कैलासको ।
पूजों सदा चौबीस जिन निर्वाण-भूमि निवासको ॥

ओं ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ पंचपरमेष्ठि जयमाला
(प्राकृत)

मणुय-णाइंद-सुरधरियछत्तत्तया, पंचकल्लाणसुक्खावली पत्तया।
दंसणं णाण झाणं अणंतं वलं, ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं ॥ १ ॥
जेहिं झाणग्गिवाणेहिं अइथट्ठयं, जम्मजरमरणणयरत्तयं दड्ढयं।
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं, ते महा दिंतु सिद्धावरं णाणयं ॥ २ ॥
पंचहाचारपंचग्गिसंसाहया, वारसंगाइ सुयजलहिं अवगाहया। मो-
क्खलच्छी महंती महं ते सया, सूरिणो दिंतु मोक्खं गया संगया ॥३॥
घोरसंसारभीमाडवीकाणणे, तिक्खवियरालणहपावपंचाणणे ॥ णट्ठ
मग्गाण जीवाण पहदेसिया, वंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ॥ ४ ॥
उग्गतवयरणकरणेहिं झीणं गया, धम्मवरझाणक्केक्कझाणं गया। णि-
ब्भरं तवसिरीए समालिंगया, साहओ ते महामोक्खपहमग्गया ५॥

एण थोत्तेण जो पंचगुरु बंदए, गुरुयसंसारघणवेल्लि सो छिंदए ।
लहइ सो सिद्धसुक्खाइवरमाणणं, कुणइ कम्मिंधणं पुंजपज्जालणं ॥६॥

आर्य्या ।

आरिहा सिद्धाइरिया उवझाया साहु पंचपरमेट्ठी ।
एयाण णमुक्कारो भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥

ओं ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुपंचपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

इच्छामि भंते पंचगुरुभत्ति काओसग्गो कओ, तस्सालोचेओ अट्ठमहापाडिहेरसंजुत्ताणं अरहंताणं । अट्ठगुणसंपण्णाणं उड्ढलोयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं । अट्ठपवयणमाउसंजुत्ताणं आइरियाणं । आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं । तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुःक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

(इत्याशीर्वादः । पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

शान्ति-पाठ

(इस पाठको बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पोंकी वर्षा करनी चाहिए)

शान्तिनाथ मुख शशि सम शोभा। जीते क्रोध मान मद लोभा॥
लक्षण सहस आठ तन राजें। कमल समान नयन द्युति छाजें॥१॥
चक्री कामदेव पद धारी। तीर्थंकर सोलम अवतारी॥
पूजत इन्द्र नरेन्द्र सुरेशा। नमूं शान्तिपद शांति विशेषा॥२॥
चौंतिस अतिशय सहित सुदेवा। करहूं शांतिनाथ पद सेवा॥
दर्शन ज्ञान वीर्य सुखऽनन्ता। प्रातिहार्य वसु युत भगवन्ता॥३॥
दीजे परमशांति सुखकारी। शांतिनाथ तुम भवभय हारी॥
मन-वच-तन करि शीश नवाऊं। जासे परम शांति पद पाऊं॥४॥

हैं पूजनीय पदपद्म प्रभू तिहारे।
पूजें जिन्हें देव नरेन्द्र सारे॥

हे शांतिनाथ सुखदायक शांतिरूप ।
हो शांत भाव सबके हे मुक्ति भूप ॥५॥

आचार्यको साधु तपस्वियोंको । सारी प्रजा राष्ट्र धराधिपोंको ॥
हे शांतिनाथजिन ! शांति प्रदान कीजे । होवे सुखी सकलदेश सुधी सुनीजे

सुख बलयुत होवे प्रजा, धारी धर्म नरेश ।
आधि व्याधि भय दूर हों, जिन वृष उदित हमेश ॥७॥

ओं ह्रीं श्री आद्ये आद्ये जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्ते पुण्यक्षेत्रे पवित्र क्षेत्रे श्री·· ·· जिनमन्दिरे मासोत्तमे मासे · पक्षे ·· दिने तिथौ क्षुल्लकक्षुल्लिकाणां श्रावक-श्राविकाणां शान्त्यर्थं कर्मक्षयार्थं जलधारा दीयते शांतिं कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं ऋद्धिं वृद्धिं समृद्धिं कुरु कुरु स्वाहा ।

(सुगन्धित जलधारा चढ़ाना चाहिये)

होवे सुखकर मनन श्रुतका सर्व साधर्मियोंको ।
ढाकूं औगुण सहज सबके कथन परके गुणोंका ॥

ध्याऊं आतम रूप सुखकर सत्य ही बैन बोलूं ।
सेऊं प्रभुके पद न जब लों कर्मके बन्ध खोलूं ॥८॥
तेरे पुनीत पद पद्म हिये विराजैं ।
करती विनय मरण समाधि काजैं ॥
हो मूल मंत्र क्रिय अक्षर मात्र पदकी ।
कीजे क्षमा हो शिव शांति जिनजी ॥

पुष्पांजलिः

विसर्जन

भूल भई जो होय, विन जाने या जानके ।
सो प्रभु पूरण होय, तुमरे चरण प्रसादसे ॥१॥
मैं प्रभु निपट अज्ञान, मंत्र क्रिया धनहीन हूं ।
चरण शरणमें आन, बार-बार युगपद नमूं ॥२॥

हूं अनभिज्ञ अजान, पूजन विधि जानूं नहीं ।
नहिं जानूं आह्वान, और विसर्जनकी विधी ॥३॥
जो-जो ध्यान लगाय, मैं पूजूं जिनराजजी ।
तिष्ठहु छमहु जिनाय, करती विनय सुभक्तिसे ॥४॥

(आसिकामें पुष्प चढ़ाना चाहिये)

आसिका श्रीजिनराजकी, लीजे शीश चढाय ।
भव भवके संकट मिटैं, दुःख दूर हो जांय ॥

(आसिकाको शिरसे लगाना चाहिये)

शान्तिपाठ संस्कृत

(शान्तिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्पवृष्टि करते रहना चाहिये)

शान्तिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् । अष्ट-
शतार्च्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥१॥ पंचममीप्सि-

तच्चक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च । शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सुः षोडशतीर्थंकरं प्रणमामि ॥ २ ॥ दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टि-र्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ । आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥३॥ तं जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि । सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

वसन्ततिलका छन्द ।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्माः । ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थंकराः सततशांतिकरा भवन्तु ।

इन्द्रवज्रा छन्द ।

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥६॥

स्रग्धरा वृत्तम् ।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः । काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ॥ दुर्भिक्षं चौरमारीक्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके, जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥७॥

अनुष्टुप् छन्द ।

प्रध्वस्तघातिकर्माणः, केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वंतु जगतः शान्तिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री आद्ये आद्ये जंबूद्वीपे भरतक्षेत्रे पुण्यक्षेत्रे पवित्रक्षेत्रे श्री ·····जिनमन्दिरे मासोत्तमे मासे मासे ···पक्षे ····तिथौ वासरे क्षुल्लकक्षुल्लिकाणां श्रावकश्राविकाणां शान्त्यर्थं कर्मक्षयार्थं जलधारा दीयते, शान्ति कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं ऋद्धिं वृद्धिं समृद्धिं कुरु कुरु स्वाहा ॥

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अथेष्ट प्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः, संगतिः सर्वदार्यैः सद्वृत्तानां गुणगुणगणकथा, दोषवादे च मौनम् ॥ सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे । सम्पद्यंतां मम भवभवे, यावदेतेऽपवर्गः ॥९॥

आर्यावृत्तम् ।

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् । तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥१०॥ अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं । तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःक्खक्खयं दिंतु ॥११। दुःक्खक्खओ कम्मक्खअ समाहिमरणं च बोहिलाहो य । मम होउ जगतबंधव तव जिणवर चरणसरणेण ॥ १२ ॥ त्रिभुवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमानंदैक कारण कुरुष्व । मयि किंकरेऽत्र करुणां यथा तथा जायते मुक्तिः ॥ १३ ॥ निर्विण्णोहं नितरामर्हन् ! बहुदुक्खया

भवस्थित्या। अपुनर्भवाय भवहर ! कुरु करुणामत्र मयि दीने ॥१४॥ उद्धर मां पतितमतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा। अर्हन्नलमुद्धरणे त्वमसीति पुनः पुनर्वच्मि ॥१५॥ त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं। मोहरिपुदलितमानं फूत्कारं तव पुरः कुर्वे ॥१६॥ ग्रामपतेरपि करुणा, परेण केनाप्युपद्रुते पुंसि। जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते ॥१७॥ अपहर मम जन्म दयां कृत्वेत्येकवचसि वक्तव्ये। तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वं ॥१८॥ तव जिनवर चरणाब्जयुगं, करुणामृतशीतलं यावत्। संसारतापतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥१९॥ जगदेकशरण ! भगवन् नौमि श्रीपद्मनंदितगुणौघ ! किं बहुना कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥२०॥

(परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ विसर्जन पाठ

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया । तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥१॥ आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनं। विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥२॥ मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च । तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥३॥ आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमं। ते मयाभ्यर्च्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिं ॥ ४ ॥

(पुष्पाजलि आसिकामें चढ़ाना चाहिये)

भाषास्तुतिपाठ

तुम तरणतारण भवनिवारण, भविकमन आनंदनो ।
श्रीनाभिनंदन जगतवंदन आदिनाथ निरंजनो ॥ १ ॥

तुम आदिनाथ अनादि सेऊं, सेय पदपूजा करूं।
कैलाश गिरिपर रिषभजिनवर, पदकमल हिरदै धरूं ॥ २ ॥
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली।
इह विरद सुनकर सरन आयो, कृपा कीज्यो नाथजी॥३॥
तुम चन्द्रवदन सु चंद्रलच्छन चंद्रपुरि परमेश्वरो।
महासेननंदन, जगतवंदन चंद्रनाथ जिनेश्वरो ॥४॥
तुम शांतिपाँचकल्याण पूजों, शुद्धमनवचकाय जू।
दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलाय जू ॥५॥
तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमल विकाशनो।
श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥६॥
जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या वश करी।
चारित्ररथ चढि भये दूलह, जाय शिवरमणी वरी ॥७॥

कंदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो ।
अश्वसेननंदन जगतवंदन सकलसँघ मंगल कियो ॥८॥
जिनधरी बालकपणे दीक्षा, कमठमानविदारकैं ।
श्रीपार्श्वनाथ जिनेंद्रके पद, मैं नमों शिर धारकैं ॥९॥
तुम कर्मघाता मोक्षदाता, दीन जानि दया करो ।
सिद्धार्थनंदन जगतवंदन, महावीर जिनेश्वरो ॥१०॥
छत्र तीन सोहैं सुरनर मोहैं, वीनती अवधारिये ।
करजोड़ि सेवक वीनवै प्रभु आवागमन निवारिये ॥११॥
अब होउ भवभव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहों ।
करजोड यो वरदान मांगूं, मोक्षफल जावत लहों ॥१२॥
जो एक मांहीं एक राजत एकमांहि अनेकनो ।
इक अनेककि नहीं संख्या नमूं सिद्ध निरंजनो ॥१३॥

चौ०—मैं तुम चरणकमलगुणगाय। बहुविधि भक्ति करी मन लाय॥
जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि। यह सेवाफल दीजे मोहि॥१४॥
कृपा तिहारी ऐसी होय। जामन मरन मिटावो मोय॥
बारबार मैं विनती करूं। तुम सेयां भवसागर तरूं॥१५॥
नाम लेत सब दुख मिट जाय। तुम दर्शन देख्या प्रभु आय॥
तुम हो प्रभु देवनके देव। मैं तो करूं चरण तव सेव॥१६॥
मैं आयो पूजनके काज। मेरो जन्म सफल भयो आज॥
पूजा करके नवाऊं शीश। मुझ अपराध क्षमहु जगदीश॥१७॥

सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान।
मो गरीबकी वीनती, सुन लीज्यो भगवान॥१८॥
पूजन करते देवका, आदि मध्य अवसान।
सुरगनके सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान॥१९॥

जैसी महिमा तुमविषैं, और धरै नहिं कोय ।
जो सूरजमें जोति है, तारनमें नहिं सोय ॥२०॥
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमाहिं पलाय ।
ज्यों दिनकर परकाशतैं, अंधकार विनशाय ॥२१॥
बहुत प्रशंसा क्या करूं, मैं प्रभु बहुत अजान ।
पूजाविधि जानूं नहीं, सरन राखि भगवान ॥२२॥

नित्यनियम पूजा समाप्त ।

श्रीपार्श्वनाथ जिनपूजा

गीताछंद—वर स्वर्ग प्राणतको विहाय, सु मात वामा सुत भये । अश्वसेनके पारस जिनेश्वर, चरन जिनके सुर नये ॥ नव हाथ उन्नत तन विराजै, उरग लच्छन पद लसैं । थापूं तुम्हें जिन आय तिष्ठो करम मेरे सब नसैं ॥१॥

ओं ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौषट् ।
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ॥

अथाष्टक—छन्द नाराच ।

क्षीरसोमके समान अंबुसार लाइये । हेमपात्र धारिकैं सु आपको चढाइये । पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूं सदा । दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चंदनादि केशरादि स्वच्छ गंध लीजिये । आप चर्न चर्च मोह-तापको हनीजिये । पार्श्व० ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा ।

फेन चंदके समान अक्षतान् लाइकैं । चर्नके समीप सार पुंजको रचाइकैं । पार्श्व० ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

केवड़ा गुलाब और केतकी चुनायकैं। धार चर्नके समीप कामको नसाइकैं॥ पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूं सदा। दीजिये निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवरादि बावरादि मिष्ट सर्पिमें सने। आप चर्न चर्चतैं क्षुधादि-रोगको हने। पार्श्वनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुद्रोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लाय रत्न दीपको सनेहपूरके भरूं। वातिका कपूर बारि मोह ध्वांतको हरूं। पार्श्वनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपगंध लेयके सु अग्निसंग जारिये। तास धूपके सुसंग अष्टकर्म वारिये। पार्श्वनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

खारिकादि चिरभटादि रत्नथाल मैं भरूं। हर्ष धारिकैं जजूं सुमोक्ष सुक्खको वरूं। पार्श्वनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरगंध अक्षतं सुपुष्प चारु लीजिये। दीप धूप श्रीफलादि अर्घतैं जजीजिये। पार्श्वनाथ० ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक (छन्द चाल)

शुभप्राणत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये।
वैशाखतनी दुतिकारी, हम पूजैं विघ्न निवारी ॥

ओं ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जनमे त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष विख्याता।
श्यामा तन अद्भुत राजे, रवि कोटिक तेज सु लाजे ॥ २ ॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कलि पौष एकादशि आई, तब बारह भावन भाई।
अपने कर लोंच सु कीना, हम पूजैं चरन जजीना ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवलज्ञान उपाई।
तब वृष उपदेश जु कीना, भवि जीवनको सुख दीना ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थीदिने केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

सित सातैं सावन आई, शिवनारि वरी जिनराई।
सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजैं मोक्ष कल्याना ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

अथ जयमाला। छंद।

पारसनाथ जिनेंद्रतने वच, पौनभखी जरतें सुन पाये। कर्‌यो सर
धान लह्यो पद आन भये पद्मावति शेष कहाये ॥ नाम प्रताप टरै

संताप सु, भव्यनको शिवशर्म दिखाये । हे अश्वसेनके नंद भले, गुण गावत हों तुमरे हरषाये ॥१॥

दोहा—केकी-कंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ ।
लक्षण उरग निहार पग, वंदौं पारसनाथ ॥

पद्धरी छंद

रची नगरी छहमास अगार । बने चहुं गोपुर शोभ अपार ॥ सु कोटतनी रचना छवि देत । कँगूरनपै लहकैं बहुकेत ॥३॥ बनारसकी रचना छवि सार । करी बहुभांति धनेश तयार ॥ तहां अश्वसेन नरेंद्र उदार । करे सुख वाम सु दे पटनार ॥ ४ ॥ तज्यो तुम प्राणत नाम विमान । भये तिनके वर नंदन आन ॥ तबै सुरइंद नियोग जु आय । गिरिंद करी विधि न्हौन सु जाय ॥५॥ पिता-घर सौंपि गये निज धाम । कुवेर करै वसु जाम सु काम ॥ बढै जिन दौज मयंक

समान। रमैं बहु बालक निर्जर आन ॥ ६ ॥ भये जब अष्टम वर्ष कुमार। धरे अणुब्रत्त महासुखकार ॥ पिता जब आन करी अरदास। करौ तुम ब्याह वरो मम आस ॥ ७ ॥ करूं तब नाहिं कहे जगचंद। किये तुम काम कषाय जु मंद ॥ चढे गजराज कुमारन संग। सु देखत गंगतनी सु तरंग ॥ ८ ॥ लख्यौ इक रंक करै तप घोर। चहूं दिशि अगनि बलै अति जोर ॥ कही जिननाथ अरे सुन भ्रात। करै बहु जीवतनी मत घात ॥ ९ ॥ भयो तब कोप कहै कित जीव। जलें तब नाग दिखाय सजीव ॥ लख्यो यह कारण भावन भाय। नये दिव ब्रह्मरिषीसुर आय ॥ १० ॥ तबहि सुर चार प्रकार नियोग। धरी शिविका निज कंध मनोग ॥ कियो वनमांहि निवास जिनंद। धरे व्रत चारित आनँद कंद ॥ ११ ॥ गहे तहँ अष्टमके उपवास। गये धनदत्त तने जु अवास ॥ दियो पयदान महासुखकार। भयी पनवृष्टि तहां

तिहिं बार ॥ १२ ॥ गये तब काननमाहिं दयाल । धर्यो तुम योग सबहिं अघ टाल ॥ तबै वह धूम सुकेतु अयान । भयो कमठाचरको सुर आन ॥१३॥ करै नभ गौन लखे तुम धीर । जु पूरब वैर विचार गहीर ॥ किये उपसर्ग भयानक घोर । चली बहु तीक्षण पवन झकोर ॥ १४ ॥ रह्यो दसहूं दिशिमें तप छाय । लगी बहु अग्नि लखी नहिं जाय ॥ सुरुंडनके विन मुंड दिखाय । पड़ै जल मूसलधार अथाय ॥१५॥ तबै पदमावति-कंथ धनिंद । चले जुग आय तहां जिनचंद । भग्यो तब रंक सु देखत-हाल । लह्यो तब केवलज्ञान विशाल ॥१६॥ दियो उपदेश महा हितकार । सुभव्यन बोधि समेद पधार ॥ सुवर्ण-भद्र जहँ कूट प्रसिद्ध । वरी शिवनारि लही वसु रिद्ध ॥१७॥ जजूं तुम चरन दुहूं कर जोर । प्रभू लखिये अब ही मम ओर ॥ कहै 'बखतावर' रत्न बनाय । जिनेश हमें भवपार लगाय ॥१८॥

घत्ता

जय पारस देवं सुरकृत सेवं, वंदत चर्न सुनागपती ।
करुणाके धारी परउपगारी, शिवसुखकारी कर्महती ॥

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल

जो पूजै मन लाय भव्य पारस प्रभु नित ही ।
ताके दुख सब जांय भीति व्यापै नहिं कितही ॥
सुख संपति अधिकाय पुत्र मित्रादिक सारे ।
अनुक्रमसों शिव लहै, रतन इमि कहै पुकारे ॥२०॥

इत्याशीर्वाद । (पुष्पाजलिं क्षिपेत्)

श्रीवर्द्धमान जिनपूजा

मत्तगयंद

श्रीमत वीर, हरै भव-पीर, भरै सुखसीर अनाकुलताई।
केहरि-अंक अरी-करदंक, नये हरिपंकाति मौलि सु आई॥
मैं तुमको इत थापतु हौं प्रभु, भक्ति समेत हिये हरखाई।
हे करुणा-धन धारक देव इहां अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई॥

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः स्थापनं।
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्।

अष्टक।

(द्यानतरायकृत नंदीश्वराष्टकादि अनेक रागोंमें बनती है)

क्षीरोदधि सम शुचि नीर, कंचन-भृंग भरों।
प्रभु वेग हरो भव-पीर, यातैं धार करों॥

श्रीवीर महा अतिवीर, सन्मतिनायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मतिदायक हो ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मलयागिर चन्दन सार, केशर संग घसों।
प्रभु भव-आताप निवार, पूजत हिय हुलसों। श्रीवीर०।२।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय भवातापविनाशनाय चन्दन निर्वपामीति स्वाहा।

तन्दुलसित शशि-सम शुद्ध, लीनों थार भरी।
तसु पुंज धरों अविरुद्ध, पावों शिवनगरी ॥ श्रीवीर०।३।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सुर-तरुके सुमन समेत, सुमन सुमन-प्यारे।
सो मनमथ भंजन हेत, पूजों पद थारे ॥ श्रीवीर०।४।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।

रस रज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी।
पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख-अरी ॥ श्रीवीर०।५।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तम खंडित मंडित नेह, दीपक जोवत हों।
तुम पद-तल हे सुख-गेह, भ्रम-तम खोवत हों ॥ श्रीवीर०।६।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हरिचन्दन अगर कपूर, चूर सुगन्ध करा।
तुम पद-तर खेवत भूर, आठों कर्म जरा ॥ श्रीवीर०।७।

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

रितुफल कलवर्जित लाय, कंचन थार भरों।
शिवफल हित हे जिनराय, तुम ढिग भेंट धरों ॥ श्रीवीर०

ओं ह्रीं श्रीमहावीरजिनेंद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जलफल वसु सजि हिमथार, तन-मन मोद धरों।
गुण गाऊँ भव-दधि तार, पूजत पाप हरों ॥ श्रीवीर० ।१।

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेंद्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक। राग टप्पा।

मोहि राखो हो शरना, श्री वर्द्धमान जिनराजजी, मोहि राखो० ॥
गरभ साढ़ सित छट्ठ लियो थिति, त्रिशला उर अघ-हरना।
सुर सुरपति तित सेव करी नित, मैं पूजों भव-तरना ॥मोहि०।१।

ओं ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जनम चैत सित तेरसके दिन, कुंडलपुर कनवरना।
सुरगिर सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजों भव-हरना ॥ मोहि० ।२।

ओं ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मँगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना।
नृपकुमार घर पारन कीनों, मैं पूजों तुम चरना ॥ मोहि० ।३।

ओं ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

शुकल दशैं वैशाख दिवस अरि, घात चतुक छय करना।
केवल लहि भवि भव-सर तारे, जजों चरन सुख भरना ॥ मोहि०

ओं ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

कातिक श्याम अमावस शिव-तिय, पावापुरतैं वरना।
गन-फनिवृन्द जजे तित बहु विध, मैं पूजों भय-हरना ॥ मोहि०

ओं ह्रीं कार्तिककृष्णामावस्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा

जयमाला। छन्द हरिगीता २८ मात्रा।

गनधर, अशनिधर, चक्रधर, हरधर, गदाधर, वरवदा।
अरु चापधर, विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा॥
दुख-हरन आनँद-भरन तारन,-तरन चरन रसाल है।
सुकुमाल गुन-मनि-माल उन्नत,-भालकी जयमाल है ॥१॥

छन्द घत्तानन्द।

जय त्रिशलानन्दन, हरि-कृत बन्दन, जगदानन्दन चन्द वरं।
भव-ताप निकन्दन, तन-कन मन्दन, रहित सपन्दन नयन धरं।२।

छन्द तोटक।

जय केवल-भानु कला-सदनं, भवि-कोक विकाशन कन्द वनं।
जगजीत महारिपु मोहहरं, रज ज्ञानदृगावर चूर करं ।१।
गर्भादिक मंगल मंडित हो, दुख-दारिदको नित खंडित हो।
जग माहिं तुमी सतपंडित हो, तुमही भव-भाव विहंडित हो ।२।
हरिवंश सरोजनको रवि हो, बलवन्त महन्त तुमी कवि हो।
लहि केवलधर्म प्रकाश कियो, अबलों सोइ मारग राजति यो ।३।
पुनि आपतने गुण माहिं सही, सुर मग्न रहैं जितने सबही।
तिनकी वनिता गुन गावत हैं, लय माननिसों मन भावत हैं ।४।
पुनि नाचत रंग उमंग भरी, तुअ भक्ति विषै पग एम धरी।
झननं झननं झननं झननं, सुर लेत तहां तननं तननं ।५।
घननं घननं घनघंट बजै, दृमदं दृमदं मिरदंग सजै।
गगनांगन गर्भगता सुगता, ततता ततता अतता वितता ।६।

धृगतां धृगतां गति बाजत है, सुर-ताल रसाल जु छाजत है।
सननं सननं सननं नभमैं, इकरूप अनेक जु धारि भमैं।७।
कइ नारि सु वीन बजावति हैं, तुमरो जस उज्जल गावति हैं।
करताल-विषै करताल धरैं, सुर ताल विशाल जु नाद करैं।८।
इन आदि अनेक उछाह भरी, सुर भक्ति करै प्रभुजी तुमरी।
तुमही जग-जीवनके पितु हो, तुमही विन कारणतैं हितु हो।९।
तुमही सब विघ्न विनाशन हो, तुमही निज आनँदभासन हो।
तुमही चितचिन्तितदायक हो, जग माहिं तुमी सब लायक हो।१०।
तुमरे पनमंगल माहिं सही, जिय उत्तम पुण्य लियो सबही।
हमको तुमरी सरनागत है, तुमरे गुनमें मन पागत है।११।
प्रभु मो हिय आप सदा बसिये, जबलों वसु कर्म नहीं नसिये।
तबलों तुम ध्यान हिये वरतो, तबलों श्रुत चिन्तन चित्त रतो।१२।

तबलों व्रत चारित चाहतु हों, तबलों शुभ भाव सुगाहतु हों।
तबलों सतसंगति नित्त रहो, तबलों मम संजम चित्त गहो ।१३।
जबलों नहिं नाश करों अरिको, शिव-नारि वरों समता धरिको
गहि यो तबलों हमको जिनजी, हम जाचतु हैं इतनी सुनजी ।१४।

घत्तानन्द।

श्रीवीर जिनेशा, नमित सुरेशा, नागनरेशा भगति भरा।
'वृन्दावन' ध्यावे, विघन नशावे, वांछित पावे शर्म वरा ।१५।

ओं ह्रीं श्रीवर्धमानजिनेंद्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीसनमतिके युगल पद, जो पूजै धरि प्रीत।
'वृन्दावन' सो चतुर नर, लहै मुक्ति-नवनीत ।१६।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्रीबाहुबलि जिनपूजन

स्थापना

बाहूबलि महाराज, श्रीआदीश्वर पुत्रजी ।
पोदनपुर उद्यान, पद पायो निर्वाण जी ॥
जीते जगत सुजान, बाहुबली निज बाहुबल ।
करूं थापनाआन, पद पाऊंअविकल अचल ॥

ओं ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ओं ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक—

सोरठा

उज्ज्वल जलकीधार, चन्द्रकान्ति सम अतिविमल ।
जन्म जरामृत हार, बाहूबलि पद पूजिये ॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥

मलयागिर घनसार, चन्द सुगन्ध घसूं रचूं ।
मम भव ताप निवार, बाहुबलिपद पूजिये ॥
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

कनक रकाबी धार, मुक्ता सम तन्दुल अमल ।
अक्षयपद सुखकार, बाहुबलि पद पूजिये ॥
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

भ्रमर करत गुंजार, कमल केतकी मालती ।
कामविथा निरवार, बाहुबलि-पद पूजिये ॥
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

क्षुधा रोग दुखहार, घेवर बावर रस भरे ।
भूख महा भय टार, बाहुबलि पद पूजिये ॥
ॐ ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मणिमय दीप सँवार, जगमग जगमग जगमगे।
ज्ञान ज्योति विस्तार, बाहूबलि पद पूजिये॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपसु अगनि मँझार, खेवत महकै दश दिशा।
अष्ट कर्म हों क्षार, बाहूबलि पद पूजिये॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिनेऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रीफल आम अनार, रितु रितु के सुन्दर घने॥
मोक्ष महाफल कार, बाहूबलि पद पूजिये॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल अष्ट प्रकार, अर्घ्य लेय पूजा करूं।
मन वच काय सँभार, बाहूबलि पद पूजिये॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाला

बाहुबलि राजा, धर्म जिहाजा, आतमकाजा करत भये।
बहु भक्ति बढ़ाऊं, तुम गुण गाऊं, पूज रचाऊं हर्षित है ॥ १ ॥

पद्धरि छन्द—

जय बाहुबली भुजबल महान। तिन भ्राता चक्री भरत जान।
जय रिषभ धरयो दीक्षानुराग। तब दियो सुननको राज भाग।१।
षट् खंड जीत निज नगर आय। चक्रीको मस्तक नमों भाय।
कर रोष बाहुबलि युद्ध ठान। जल मल्ल नयन युध जीत जान।२।
यह निमित पाय वैराग्य धार। द्वादश अनुपेक्षा चिन विचार।
तप एक वर्षतक कियो घोर। नहिं मिल्यो जगनको ओर छोर।३।
लिपटे अहि बेल चढ़ो घनेर। तापर न डिग्यो तुम मन सुमेर।
इक शल्य रही मनमें समाय। छद्मस्थ ज्ञानमें नहिं लखाय।४।

तव भरत शीश नायो सु आय। पूजत प्रभु केवलज्ञान पाय।
पुनि चौ अघातियाको नशाय। पहुँचे शिव पंचमपद लहाय।५।
तुम प्रतिमाकी महिमा अपार। दक्खिन सु बेलगोला मझार।
मातश्री हिय उपजी सुभक्ति। थापी 'आरा' निज अल्प शक्ति।६।
'बाला विश्राम' में "धर्म-कुंज"। पूजें सब मिल पद पुण्य पुंज॥
प्रतिमा नवहस्त सुतन विशाल। कर जोड़ चरण तल नमत भाल।७।
ओं ह्रीं श्रीबाहुबलिस्वामिने अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

बाहूबलि मूरत निरखि, हृदय कमल विहसाय।
'जया शील' भवतरनको, देहु उपाय बनाय॥८॥ पुष्पांजलिः।

अथ बाहुबलिस्वामी पूजा

श्रीपौदनेशं पुरुदेवसूनुं तुंगात्मकं तुंगगुणाभिरामं।
देवेन्द्रनागेन्द्रमुनीन्द्रवन्द्यं श्रीदोर्बलीशं महयामि भक्त्या॥

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीमद्बाहुबलिजिनदेव अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं॥

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीमद्बाहुबलिजिनदेव अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं॥

ओं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीमद्बाहुबलिजिनदेव अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं

अष्टकं

दिव्यदीर्घिकादिनव्यतीर्थपावनोदकैः
सेव्यमानभव्यवृन्दपापतापनाशकैः।
विन्ध्यशैलमस्तके सुरासुरौघपूजितं।
सुन्दरांगमर्चयामि दोर्बलीशमच्युतं॥

ओं ह्रीं अर्ह श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने दिव्यजलं निर्वपामि स्वाहा॥१॥

चन्दनागरुप्रयुक्तचारुगन्धचन्दनैः
इन्दुकुंकुमादिजातसौरभाभिरामकैः ।
इन्द्रवृन्दनन्दितोरुगन्धवृष्टिशोभितं
बन्धुरांगमर्चयामि दोर्बलीशमच्युतं ॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

रूप्यशुभ्रसाग्रदीर्घदभ्रशालितण्डुलैः
प्रेक्षमाणभक्तलोकसार्थदृङ्मनोहरैः ।
मोक्षलोकदायकप्रवीणधर्मनायकं
यक्षवन्द्यमर्चयामि दोर्बलीशमिष्टद ॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

सिन्धुवारकैरवाब्जयूथिकादिपुष्पकैः
गन्धलीनभृंगराजसौरभाभिरामकैः ।

गुह्यकामरौघनीतदिव्यपुष्पवृष्टिगं
गन्धमूर्तिमर्चयामि गोमटेशमव्ययं ॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

मोदकप्रमोदजातलड्डुकादिसंयुतैः
क्षीरशर्कराज्ययुक्तपायसैर्मनोहरैः ।
स्तूयमानसर्वलोकवारसौख्यदायकं
स्वात्मसौख्यमर्चयामि दोर्बलीशमक्षयं ॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

फेनपिण्डभासमानचन्द्रखण्डदीपकैः
शातकुम्भनिर्मितोरुभाजनादिरंजितैः ।
विश्वलोकव्याप्तदिव्यज्ञानलोचनान्वितं
पूजयामि दोर्बलीशमक्षयाय कारणं ॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

गन्धसारसारगुग्गुलादिपांशुधूपकैः
गन्धलीनभृंगराजसौरभाभिरामकैः ।
ज्ञानदावदग्धकामदोषदारुवृन्दकं
देवदेवमर्चयामि दोर्बलीशमंजसा ॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने अष्टकर्मदहनाय धूप निर्वपमीति स्वाहा ।

बीजपूरमोचपूगनागरंगकर्कटी ।
नालिकेरजंभजंबुधृद्धिकादिसत्फलैः ॥
कोमलारुणप्रवालसंयुतांघ्रियुग्मकं ।
पूर्वकामदेवमर्चयामि गोमटेशिनं ॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

वारिगंधचारुशालितंडुलप्रसूननै-
वेद्यदीपधूपसत्फलाघैर्निर्मिताघ्यकैः ॥

देवराजभोगिराजभूमिराजपूजितं
देवदेवमर्चयामि विश्वजीवदायिनं ॥

ओं ह्रीं श्रीमद्बाहुबलिस्वामिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

व्योमनिम्नगादिपूरसारवारिधारया
हेमजातपूतकुंभनालरंध्रमुक्तया ॥
भूमिमंडलप्रसिद्धविंध्यशैलशोभितं
कामदेवमर्दनोत्कदोर्बलीशमर्चये ॥

शान्तिधारा

सहजसौख्यमंडितं, विमलबोधभासुरं ।
नलिनसंकुलैर्यजे , दोर्बलीशमिष्टदं ॥ १ ॥
विनुतभव्यकामदं , प्रणतदेवमंडलं ।
भुजबलीशमर्चये मल्लिकाभिरंजसा ॥ २ ॥

दिव्यबोधभासुरं, भव्यवाक्यबोधकं।
नव्यजातिपुष्पकैर्दोर्बलीशमर्चये ॥ ३ ॥
सकलदेववंदितं विकलमोहसंकुलं।
कुटजकुड्मलैर्यजे दोर्बलीशमिष्टदं ॥ ४ ॥
सोमसूर्यभायुतं कामदेवमाश्रिमं।
वकुलमालया यजे दोर्बलीशमिष्टदं। पुष्पांजलिः।५।

जिन-सहस्रकूट पूजा

स्थापना—

दोहा

सहस्रकूट मन्दिर महा, महिमा कौन कहाय।
प्रतिमा सहस सुहावनी, तिष्ठ तिष्ठ इत आय॥

ॐ ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ जिनप्रतिमासमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ जिनप्रतिमासमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ जिनप्रतिमासमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

अथाष्टक—

सोरठा

प्राशुक जल शुभ लाय, कंचन झारीम भरूं ।
दुःख त्रिदोष नशाय, सहस्रकूट पूजूँ सदा ॥

ॐ ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ श्रीजिनेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जल निर्वपामीति स्वाहा

बावन गंध घिसाय, कनक कटोरी लीजिये ।
जग संताप पलाय, सहस्रकूट पूजूँ सदा ॥

ओं ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ श्रीजिनेभ्यो भवतापविनशानाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षत स्वच्छ कराय, निर्मल जल सु पखारिके ।
अक्षय पद मिल जाय, सहस्रकूट पूजूं सदा ॥

ओं ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ श्रीजिनेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

बेला जुही चुनाय, चरण चढाऊं चावसे ।
मदन-बाण विनशाय, सहसूकूट पूजूं सदा ॥

ओं ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ श्रीजिनेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

लाडू गोझा लाय, बहु विध भाव लगाइके ।
भूख दुःख मिट जाय, सहसूकूट पूजूं सदा ॥

ओं ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ श्रीजिनेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

घृत भरि दीप जलाय, तुम तन सम शोभा लसे ।
ज्ञान ज्योति जग जाय, सहसूकूट पूजूं सदा ॥

ओं ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ श्रीजिनेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीप निपार्वमीति स्वाहा ।

अगर कपूर मिलाय, धूप दशांग बनाइये ।
आतम गुण प्रकटाय, सहसकूट पूजूं सदा ॥

ओं ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ श्रीजिनेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुवरण थाल भराय, पिस्ता दाख बदामसे ।
मनवांछित फलदाय, सहस्रकूट पूजूं सदा ॥
ओं ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ श्रीजिनेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा ।

जल फल द्रव्य मिलाय, अर्घ्य बनाऊँ भावसे ।
मन वच काय लगाय, सहस्रकूट पूजूं सदा ॥
ओं ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ श्रीजिनेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ जयमाला

दोहा

सहस्रकूटकी आरती, करो भविक चितलाय ।
श्रद्धा हिरदे धारिये, तत्क्षण पाप पलाय ॥१॥

पद्धरि-छन्द

जय सहस्रकूट महिमा महान । जाके बंदत सब पाप हान ॥
जिनराज सहस मंदिर मँझार । भविजनको दरशत सुख अपार ॥१॥

तुम गुण अनन्त अरहंत देव। सुर नर तुम पद नित करत सेव॥
लहि केवल कर्म कियो सु अन्त। सुख वीर्य ज्ञान दर्शन अनंत॥२॥
है ज्ञान विभूति विविध प्रकार। प्रभु बैठे निज आतम निहार॥
तुम ध्वनि सुन भवि भवपार होत। जिन मुकति पंथ कीनो उद्योत।३।
मन मुदित सहस्र जिन कूट देख। मनु काल चतुर्थ पुनः सु पेख॥
मंदिर प्रतिमा थापे जु एक। महिमा ताकी वरणी अनेक॥ ४॥
प्रतिमा सहस्र अरु सहस्र कूट। फिर क्यों न जाय भव भ्रमण छूट॥
त्रिय भक्ति विशेष कियो सुकाज। भयो पुण्य प्रबल अघ गयो भाज॥
बंदत नगरीके भविक आय। अनुपम शोभा वरणी न जाय॥५॥
ओं ह्रीं श्रीसहस्रकूटचैत्यालयस्थ श्रीजिनेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा

काल चतुर्थ समान, अद्भुत है रचना महा।
'जया शीला' मनमाहिं, पूजत अनुपम सुख लहा॥ पुष्पांजलिः

श्रीगुरु-पूजन

दोहा--चहुंगति दुख सागरविषै, तारनतरन जिहाज ।
रतनत्रयनिधि नगन तन, धन्य महा मुनिराज ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्रावतरावतर संवौषट् ।
ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

शुचि नीर निर्मल छीर दधिसम, सुगुरु चरन चढ़ाइया ।
तिहुँधार तिहुं गदटार स्वामी, अति उछाह बढ़ाइया ॥
भवभोगतन वैराग्य धार, निहार शिव तप तपत हैं ।
तिहुं जगतनाथ अधार साधु सु, पूज नित गुन जपत हैं ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा

करपूर चंदन सलिलसौं घसि, सुगुरुपद पूजा करौं ।

सब पापताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल विस्तरौं ॥भव०॥२॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो भवातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा

तंदुल कमोद सुवास उज्जल, सुगुरुपगतर धरत हैं।
गुनकार औगुनहार स्वामी, बंदना हम करत हैं ॥भव०॥ ३ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा

शुभफूलरासप्रकाश परिमल, सुगुरु पायनि परत हों।
निरवार मारउपाधि स्वामी, शील दृढ़ उर धरत हों ॥भव०॥४॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा

पकवान मिष्ट सलौन सुंदर सुगुरु पाँयनि प्रीति सौं।
धर छुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजे रीति सौं ॥भव०॥५

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्य क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा

दीपकउदोत सजोत जगमग, सुगुरुपद पूजों सदा।
तमनाश ज्ञानउजास स्वामी, मोहि मोह न हो कदा ॥भव०॥६॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीप निर्वपामीति स्वाहा

वहु अगर आदि सुगंध खेऊं, सुगुण पद पझहिं खरे।
दुखपुंजकाठ जलाय स्वामी, गुण अछय चित्तमैं धरे ॥भव०॥७॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

भर थार पूग वदाम वहुविध, सुगुरुक्रम आगैं धरों।
मंगल महाफल करो स्वामी, जोर कर विनती करों ॥भव० ॥८॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली।
'द्यानत' सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहिं तार उतावली ॥भव०॥९॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ जयमाला।

दोहा--कनककामिनी विषयवश, दीखै सब संसार।
त्यागी वैरागी महा, साधु सुगुन भंडार ॥ १ ॥

तीन घाटि नवकोड सब, बंदौं सीस नवाय ।
गुन तिन अट्ठाईस लों, कहूं आरती गाय ॥२॥

बेसरी छंद--एक दया पालैं मुनिराजा, राग दोष द्वै हरन परं ।
तीनोंलोक प्रगट सब देखें, चारों आराधन नकरं॥
पंच महाव्रत दुद्धर धारैं, छहों दरव जानैं सुहितं ।
सात भंगवानी मन लावैं, पावैं आठ रिद्ध उचितं ॥ ३ ॥
नवों पदारथ विधि सौं भाखैं, बंध दशों चूरन करनं ।
ग्यारह शंकर जानैं मानैं, उत्तम बारह व्रत धरनं ॥
तेरह भेद काठिया चूरैं, चौदह गुनथानक लखियं ।
महाप्रमाद पंचदश नाशैं, सोलकषाय सबै नशियं ॥ ४ ॥
बंधादिक सत्रह सब चूरैं, ठारह जन्मन मरन मुनं ।
एक समय उनईस परीसह, बीस प्ररूपनिमैं निपुणं ॥

भाव उदीक इकीसों जानैं, वाइस अभखन त्याग करं।
अहिमिंदर तेईसों वंदौं, इंद्र सुरग चौबीस वरं॥ ५॥
पच्चीसों भावन नित भावैं, छब्बिस अंग उपंग पढ़ैं।
सत्ताईसों विषय विनाशैं, अट्ठाईसों गुण सु पढ़ैं॥
शीत समय सर चौहटवासी, ग्रीषमगिरिशिर जोग धरं।
वर्षा वृक्ष तरैं थिर ठाढ़े, आठ करम हनि सिद्ध वरं॥ ६॥

दोहा----कहौं कहालों भेद मैं, बुध थोरी गुन भूर।
'हेमराज' सेवक हृदय, भक्ति करो भरपूर॥ ७॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इत्याशीर्वादः। पुष्पांजलिः

नवग्रह अरिष्ट-निवारक समुच्चय पूजा

श्लोक।

प्रणम्याद्यंततीर्थेशं, धर्मतीर्थप्रवर्त्तकं।
भव्यविघ्नोपशांत्यर्थं, ग्रहार्च्या वर्ण्यते मया॥
मार्तंडेन्दुकुजसौम्य-, सूरसूर्यकृतांतकाः।
राहुश्च केतुसंयुक्तो, ग्रहशांतिकरा नव॥

दोहा।

आदिअंत जिनवर नमौं, धर्म प्रकाशन हार।
भव्यविघ्न उपशांतकौं, ग्रहपूजा चित धार॥
काल दोष परभावसौं, विकलप छूटे नाहिं।
जिन पूजामें ग्रहनिकी, पूजा मिथ्या नाहिं॥

इसही जम्बूद्वीपमें, रवि शशि मिथुन प्रवान ।
ग्रह नक्षत्र तारा सहित, जोतिप चक्र प्रवान ॥
तिनहीके अनुसार सों, कर्मचक्रकी चाल ।
सुख दुख जानै जीवकों, जिन-वच नेत्र विसाल ॥
ज्ञानप्रश्नव्याकर्णमें, प्रश्न अंग है आठ ।
भद्रबाहु मुख जनित जो, सुनत कियो मुख पाठ ॥
अवधिधार मुनिराजजी, कहै पूर्व कृत कर्म ।
उनके वचन अनुसार सों, हरै हृदयको भर्म ॥

समुच्चय पूजा ।

दोहा ।

अर्क चंद्र कुज सोम गुरु, शुक्र शनिश्चर राहु ।
केतु ग्रहारिष्ट नाशने, श्रीजिन पूज रचाहु ॥

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकचतुर्विंशतिजिनाः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरण ॥

अष्टक, गीतिका छन्द ।

छीर सिन्धु समान उज्जल, नीर निर्मल लीजिये ।
चौबीस श्रीजिनराज आगे, धार त्रय शुभ दीजिये ॥
रवि सोम भूमज सौम्य गुरु कवि, शनि तमो जुत केतवे ।
पूजिये चौबीस जिन ग्रहऽरिष्ट नाशन हेतवे ॥

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय जलं नि० स्वाहा।

श्रीखंड कुंकुम हिम सुमिश्रित, घिसौं मन करि चावसौं ।
चौबीस श्री जिनराज अघहर, चरण चरचों भावसौं ।रवि०।२।

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय चंदनं निर्व०

अक्षत अखंडित सालि तंदुल, पुंज मुक्ताफलसमं ।
चौबीस श्रीजिन चरण पूजत, नास है नवग्रह भ्रमं । रवि० ।३।

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय अक्षतं नि०।

कुंद कमल गुलाब केतकि, मालती जाही जुही ।
कामबाण विनाश कारण, पूजि जिनमाला गुही ॥रवि० ॥४॥
ओं ह्री सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय पुष्पं नि० ।

फैनी सुहारी पूवा पापर, लेउ मोदक घेवरं ।
शतछिद्र आदिक विविधि विंजन, क्षुधाहर बहु सुखकरं ।रवि०।५
ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय नैवेद्यं नि०

मणिदीप जगमग जोति तमहर, प्रभुके आगे लाइये ।
अज्ञान नाशक निज प्रकाशक, मोह तिमिर नसाइये ।रवि०।६
ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय दीपं नि० ।

कृष्णा अगर घनसार मिश्रित, लोंग चन्दन लाइये ।
गृहऽरिष्ट नाशन हेत भविजन, धूप जिनपद खेइये ॥रवि०॥७॥
ओं ह्री सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय धूप नि० ।

बादाम पिस्ता सेव श्रीफल, मोच नीबू सद फलं ।

चौवीस श्रीजिनराज पूजत, मनोवांछित शुभ फलं ॥रवि०॥८॥

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय फलं नि० ।

जल गंध सुमन अखण्ड तन्दुल, चरु सुदीप सुधूपकं ।

फल द्रव्य दूध दही सुमिश्रित, अर्घ देय अनूपकं ॥रवि०॥

ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्रायपंचकल्याणकप्राप्ताय अर्घं नि० ।

अथ जयमाला

(यहांपर नारियल लेना)

॥ दोहा ॥

श्रीजिनवर पूजा किये, गृहअरिष्ट मिट जांय ।
पंच ज्योतिषी देव सब, मिल सेवें प्रभु पांय ॥

पद्धरि छन्द ।

जय जय जिन आदिमहंत देव, जय अजित जिनेश्वर करहिं सेव ।
जय जय संभव भव भव निवार, जय जय अभिनन्दन जगत तार ॥

जय सुमति सुमति दायक विशेष, जय पद्म प्रभु लख पदम लेख।
जय जय सुपास हर कर्म फांस, जय जय चन्द्रप्रभु सुख निवास ॥
जय पुष्पदन्त कर कर्म अंत, जय शीतल जिन शीतल करंत।
जय श्रेय करण श्रेयांस देव, जय वासुपूज्य पूजत सुमेव ॥
जय विमल विमल कर जगत जीव, जय जय अनन्त सुख अतिसदीव।
जय धर्मधुरन्धर धर्मनाथ, जय शांति जिनेश्वर मुक्तिसाथ ॥
जय कुन्थनाथ शिवसुख निधान, जय अरह जिनेश्वर मुक्तिखान।
जय मल्लिनाथ पद पद्म भास, जय मुनिसुव्रत सुव्रत प्रकाश ॥
जय जय नमिदेव दयाल सन्त, जय नेमनाथ तसु गुण अनन्त।
जय पारस प्रभु संकट निवार, जय वर्धमान आनन्दकार ॥
नव ग्रहअरिष्ट जब होय आय, तब पूजे श्रीजिन देव पाय।
मनवचतन मन सुख सिन्धु होय, ग्रह शान्त रीति यह कही जोय ॥
ओं ह्रीं सर्वग्रहारिष्टनिवारकश्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरजिनेन्द्राय पंचकल्याणकप्राप्ताय महार्घं नि०।

चौबीसौं जिनदेव प्रभु, ग्रहसम्बन्ध विचार।
पुनि पूजों प्रत्येक तुम, जो पाऊं सुख सार ॥

आशीर्वादः, पुष्पांजलिः।

गुरु-पूजन

(लेखिका—श्रीमती द्रोपदी देवी आरा)

स्थापना

श्री मुनिराज दयाके सागर, तिष्ठो हे गुरु आज।
मन वच काय लगायके, बंदों श्री रिषिराज ॥

ओं ह्रीं श्रीमुनिवराः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ओं ह्रीं श्रीमुनिवराः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ओं ह्रीं श्रीमुनिवराः अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

जल सुप्राशुक निर्मल लाइके, कनक झारीमें भरवाइके ।
जजतु हों मुनिवर गुण गाइके, चरण अम्बुज प्रीति लगाइके ॥
ओं ह्रीं श्रीमुनिवरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
नीर केसर संग घिसाइके, त्रिजग मेटन भाव लगाइके । ज० ।चंदनं।
धवल तंदुल अखंडित ल्याइकें, थाल सुवरण पुंज चढ़ाइके ।ज०।अक्षतं
कमल चंपा बेलि चुनाइकें, काम नाशन डालि सजाइके । ज० ।पुष्पं।
पूवा पूड़ी लाडु बनाइके, क्षुधानाशन तुमढिंग ल्याइके ।ज०।नैवेद्यं।
दीप जगमग जोति जगाइके, तिमिर मोह विध्वंसन आइके ।ज०।दीपं
अगर चंदन धूप कुटाइके, कर्म नाशन अग्नि जलाइके । ज० । धूपं ।
आम्र निंबु अनार मंगाइके, मोक्ष फलकी आश लगाइके ।ज० ।फलं।
जल फलादिक अर्घ बनाइके, चरण पूजूं हिय हुलसाइके ।जजतु हों०।
ओं ह्रीं श्रीमुनिवरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

शान्तिसिन्धु मुनिराजजी, कृपासिंधु दातार।
भव-समुद्रमें डूबती, दे अवलंब निकार॥

जय जय श्री मुनिवर वीर नमों। जय धर्म धुरंधर धीर नमों॥
जय राग रोष परिहार नमों। जय जामन मरण विनाश नमों॥
जय द्वादश तप धर धीर नमों। जय दशधा धर्म गहीर नमों॥
जय पंच महाव्रत धार नमों। जय पांच समिति मनहार नमों॥
जय मन वच काय संभारि नमों। जय बाइस परिषह टारि नमों॥
जय दयासिन्धु भवतार नमों। जय तीन रत्न दातार नमों॥

चरणाम्बुज महराजके, पूजे मन वच काय।
कर्म कलंक निवारिके, निश्चय शिवपुर जाय॥

ओं ह्रीं श्रीमुनिवरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ इत्याशीर्वादः, पुष्पांजलिं क्षिपेत्॥

अथ तीस चौबीसी पूजा

अडिल्ल छंद

पांच भरत शुभ क्षेत्र, पांच ऐरावते,
आगत नागत वर्त्तमान जिन शास्वते।
सो चौबीसी तीस जजौं मन लायके,
आह्वानन विधि करूं वार त्रय गायके॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिदशक्षेत्रस्थ सप्तशतविंशतिजिनेन्द्राः अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण॥

अथाष्टक

(चाल रेखता)

नीर दधि क्षीर सम लायो, कनकके भृंग भरवायो।
जरा-मृतु रोग संतायो, अबै तुम चर्ण ढिंग आयो॥

दीप ढाई सरस राजै, क्षेत्र दश ता विषैं छाजै।
सात सत बीस जिन राजै, पूजते पाप सब भाजै ॥१॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिदशक्षेत्रस्थ सप्तशतविंशतिजिनेन्द्रेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं

सुरभि जुत चंदन लायो, संग करपूर घसवायो।
धार तुम चरण ढरवायो, भव आताप नसवायो॥
द्वीप ढाई सरस राजै, क्षेत्र दश ता विषैं छाजै।
सात सत बीस जिन राजै, पूजते पाप सब भाजै॥

ॐ ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिदशक्षेत्रस्थ सप्तशतविंशतिजिनेन्द्रेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं

चंद सम तंदुलं सारं, किरण मुक्ता जु उनहारं।
पुंज तुम चरण ढिंग धारं, अखैपद काजके कारं॥
द्वीप ढाई सरस राजै, क्षेत्र दश ता विषैं छाजै।
सात शत बीस जिन राजै, पूजते पाप सब भाजै ॥३॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिदशक्षेत्रस्थ सप्तशतविंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं०

पुष्प शुभ गंध जुत सोहे, सुगंधित तास मन मोहे।
जजत तुम मदन छय होवे, मुक्ति पुर पलकमें जोवे॥
द्वीप ढाई सरस राजे, क्षेत्र दश ता विषै छाजे।
सात शतबीस जिन राजें, पूजते पाप सब भाजे॥४॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिदशक्षेत्रस्थ सप्तशतविंशतिजिनेन्द्रेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं०

सरस व्यंजन लिया ताजा, तुरत बनवाय पाखाजा।
चरण तुम जजों महाराजा, क्षुधा दुख पलकमें भाजा॥
द्वीप ढाई सरस राजे, क्षेत्र दश ता विषै छाजे।
सातशतबीस जिन राजे, पूजते पाप सब भाजे॥५॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिदशक्षेत्रस्थ सप्तशतविंशतिजिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०

दीप तम नाशकारी है, सरस शुभ ज्योतिधारी है।
होय दशदिश उजारी है, धूम्र मिस पाप जारी है॥

द्वीप ढाई सरस राजे, क्षेत्र दश ता विषै छाजे।
सात शतबीस जिन राजे, पूजते पाप सब भाजे ॥६॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिदशक्षेत्रस्थ सप्तशतविंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं०

सरस शुभ धूप दशअंगी, जराऊं अग्निके संगी।
कर्मकी सेन चतुरंगी, चरण तुम पूजते अंगी॥
द्वीप ढाई सरस राजे, क्षेत्र दश ता विषै छाजे।
सात शतवीस जिन राजे, पूजते पाप सब भाजे ॥७॥

ओं ह्रीं पचमेरुसम्बन्धिदशक्षेत्रस्थ सप्तशतविंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं०

मिष्ट उत्कृष्ट फल ल्यायो, अष्ट अरि दुष्ट नसवायो।
श्री जिन भेंट करवायो, कार्य मन वांछितो पायो॥
द्वीप ढाई सरस राजे, क्षेत्र दश ता विषै छाजे।
सातशतवीस जिनराजे, पूजते पाप सब भाजे ॥८॥

ओं ह्रीं पचमेरुसम्बन्धिदशक्षेत्रस्थ सप्तशतविंशतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं०

द्रव्य आठों जु लीना है, अर्घ कर में नवीना है।
पूजते पाप छीना है, 'भानमल' जोड़ि कीना है॥
दीप ढाई सरस राजे, क्षेत्र दश ता विषै छाजे।
सातसतबीस जिन राजे, पूजते पाप सब भाजे॥९॥

ओं ह्रीं पंचमेरुसम्बन्धिदशक्षेत्रस्थ सप्तशतविंशतिजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपद प्राप्तये अर्घं०

अथ प्रत्येक अर्घ (अडिल्ल छंद)

आदि सुदर्शन मेरु तनी दक्षिण दिशा,
भरत क्षेत्र सुखदाय सरस सुंदर बसा।
तिहँ चौबीसी तीन तने जिनरायजी,
बहत्तरि जिन सर्वज्ञ नमों शिरनायजी॥१॥

ओं ह्रीं सुदर्शनमेरुके दक्षिणदिशाके भरतक्षेत्रसम्बन्धि तीनचौबीसीके बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

ताहि मेरु उत्तर ऐरावत सोहनो,
आगत नागत वर्त्तमान मनमोहनो।

तिहँ चौबीसी तीन तने जिनरायजी,
बहत्तरि जिन सर्वज्ञ नमों शिरनायजी ॥२॥

ओं ह्रीं सुदर्शनमेरुके उत्तरदिशाके ऐरावतक्षेत्रसम्बन्धि तीनचौबीसीके बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

(कुसुमलता छद)

खंड धातुकी विजय मेरुके दक्षिण दिशा भरत शुभ जान,
तहां चौबीसी तीन विराजै आगत नागत अरु वर्त्तमान।
तिनके चरण कमलको निशदिन अर्घ चढ़ाय करूं उर ध्यान,
इस संसार भ्रमणतैं तारो अहो जिनेश्वर करुणावान ॥३॥

ओं ह्रीं धातुकीखंडकी पूर्वदिश विजयमेरुके दक्षिणदिशभरतक्षेत्रसम्बन्धी तीन चौबीसीके बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

इसी दीपकी प्रथम शिखरके उत्तर ऐरावत जो महान।
आगत नागत वर्त्तमान जिन बहत्तरि सदा शास्वते जान ॥

तिनके चरण कमलको निशदिन अर्घ चढ़ाय करूं उर ध्यान।
इस संसार भ्रमणतैं तारो अहो जिनेश्वर करुणावान ॥४॥

ओं ह्रीं धातकीखंडकी पूर्वदिश विजयमेरुके उत्तरदिश ऐरावतक्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसीके बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥

(चौपाई छंद)

खंड धातु गिर अचल जुमेरु, दक्षिण तास भरत बहु घेर।
तामें चौबीसी त्रय जान, आगत नागत अरु वर्तमान ॥५॥

ओं ह्री धातुकीखडकी पश्चिमदिश अचलमेरुके दक्षिणदिश भरतक्षेत्रसम्बन्धी तीन चौबीसीके बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥

अचलमेरु उत्तर दिश जाय, ऐरावत शुभ क्षेत्र बताय।
तामें चौबीसी त्रय जान, आगत नागत अरु वर्त्तमान ॥६॥

ओं ह्रीं धातुकीखडकी पश्चिमदिश अचलमेरुके उत्तरदिश ऐरावतक्षेत्रसम्बन्धी तीन चौबीसीके बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥

(सुन्दरी छंद)

दीप पुष्करकी पूरब दिशा, मंदिर मेरुकी दक्षिण भरत सा।
ता विषैं चौबीसी तीन जू, अर्घ लेय जजों परबीन जू ॥७॥

ओं ह्रीं पुष्करद्वीपकी पूर्वदिश मंदिरमेरुकी दक्षिणदिश भरतक्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसीके बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपमीति स्वाहा ॥ ७ ॥

गिर सुमंदिर उत्तर जानियो, क्षेत्र ऐरावत सु बखानियो।
ता विषैं चौबीसी तीन जू, अर्घ लेय जजों परबीन जू ॥८॥

ओं ह्रीं पुष्करदीपकी पूर्वदिश मंदिरमेरुकी उत्तरदिश ऐरावत क्षेत्रसम्बन्धी तीन चौबीसीके बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ८ ॥

(पद्धरि-छन्द)

पश्चिम पुष्कर गिर विद्युतमाल, ता दक्षिण भरत बन्यो रसाल।
तामें चौबीसी है जु तीन, वसु द्रव्य लेय पूजों प्रवीन ॥९॥

ओं ह्रीं पुष्करार्द्ध द्वीपकी पश्चिमदिश विद्युन्मालीमेरुके दक्षिणदिश भरतक्षेत्रसम्बन्धी तीन चौबीसीके बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपमीति स्वाहा ॥ ९ ॥

याही गिरके उत्तर जु ओर, ऐरावत क्षेत्र तनी सु ठौर।
तामें चौबीसी है जु तीन, वसु द्रव्य लेय पूजों प्रवीन ॥१०॥

ओं ह्रीं पुष्करार्द्धद्वीपकी पश्चिमदिश विद्युन्मालीमेरुके उत्तरदिशा ऐरावतक्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसीके बहत्तरि जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १० ॥

(कुंडलिया छन्द)

द्वीप ढाईके विषै, पांच मेरु हितदाय।
दक्षिण उत्तर तासुके, भरत ऐरावत भाय ॥
भरत ऐरावत भाय एक क्षेत्रके माहीं।
चौबीसी है तीन तीन दशहीके माहीं ॥
दशों क्षेत्रके तीस, सात सौ बीस जिनेश्वर।
अर्घ लेय करजोर जजों, 'रविमल' मन शुधकर ॥११॥

ॐ ह्रीं पांचमेरुसम्बन्धी दशक्षेत्रकेविषैं तीसचौबीसीके सातसौबीस जिनेन्द्रेभ्यो अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ११ ॥

अथ जयमाला

दोहा

चौबीसी तीसों तनी, पूजा परम रसाल।
मन वच तनसों शुद्धकर, अब बरनों जयमाल॥

(पद्धरि-छन्द)

जय द्वीप ढाईमें जु सार, गिर पांच मेरु उन्नत अपार।
ता गिर पूरब पश्चिम जु ओर, शुभ क्षेत्र विदेह बसे जु ठोर॥१॥
ता दक्षिण क्षेत्र भरत सु जान, है उत्तर ऐरावत महान।
गिर पांच तने दश क्षेत्र जोय, ताको वर्णन सुनि भव्य लोय॥२॥
जो भरत तने बरनन विशाल, तैसे ही ऐरावत रसाल।
इक क्षेत्र बीच विजयार्द्ध एक, ता ऊपर विद्याधर अनेक॥३॥

इक क्षेत्र तनो षट् खंड जान, तहां छहों काल वर्तैं समान।
जो तीन कालमें भोगभूमि, दश जाति कल्पतरु रहे झूमि ॥४॥
जब चौथो काल लगे जु आय, तब कर्मभूमि बरते सहाय।
जब तीर्थंकरको जनम होय, सुर लेय जजैं गिरमेरु सोय ॥५॥
बहु भक्ति करैं सब देव आय, ताथेइ थेइ थेई तान लाय।
हरि तांडव नृत्य करैं अपार, सब जीवन मन आनन्दकार ॥६॥
इत्यादि भक्ति करिके सुरिन्द, निजथान जाय जुत देववृंद।
या विधि पांचो कल्याण होय, हरिभक्ति करै अति हरष होय ॥७॥
या काल विषैं पुन्यवन्त जीव, नरजन्म धार शिव लहै अतीव।
सब त्रेसठ पुरुष प्रवीन जोय, सब याही काल विषैं जु होय ॥८॥
जब पंचम काल करै प्रवेश, मुनि धर्म तनो नहिं रहे लेश।

बिरले के दक्षिण देशमाहिं, जिनधर्मी जन बहुते जु नाहिं ॥९॥
तब आवत है षष्टम जु काल, दुखमें दुख प्रगटे अति कराल।
तब मांस भक्षि नर सर्व होय, जहां धर्म नाम सुनिये न कोय ॥१०॥
याही विधिसों षट् काल जोय, दश क्षेत्रनमें इकसार होय।
सब क्षेत्रनमें रचना समान, जिनवाणी भाष्यो सो प्रमान ॥११॥
चौबीसी है इक क्षेत्र तीन, दश क्षेत्रनमें जानों प्रवीन।
आगत नागत अरु वर्तमान, सब सात सतक अरु बीस जान।१२।
सबही जिनराज नमों त्रिकाल, मोहि भव वारिधितैं ल्यो निकाल।
यह वचन हियेमें धारिलेव, मम रक्षा करहु जिनेन्द्र देव ॥१३॥
'रविमल' की विनती सुनो नाथ, मैं पांय पड़ूं जुग जोरि हाथ।
मनवांछित कारज करो पूर, यह अर्ज हृदयमें धरि हजूर ॥१४॥

घत्ता

सत सात जु बीसं, श्री जगदीशं, आगत नागत वरततु हैं।
मन वच तन पूजै, शुध मन हूजै, सुरग-मुक्तिपद धारत हैं॥

इति

ओं ह्रीं पांच भरत पांच ऐरावत दशक्षेत्रकेविषैं तीस चौबीसीके सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥

इत्याशीर्वादः।

निर्वाणकांड (गाथा)

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्जजिणणाहो। उज्जंते णेमि-जिणो पावाए णिव्बुदो महावीरो ॥१॥ वीसं तु जिणवरिंदा अमरा-सुर वंदिदा धुदकिलेसा। सम्मेदे गिरि सिहरे णिव्वाण० ॥२॥ वर-दत्तो य वरंगो सायरदत्तोय तारवरणयरे। आहुट्ठयकोड़िओ णिव्वाण० ॥३॥ णेमिसामि पज्जणो संबूकुमारो तहेव अणिरुद्धो।

वाहत्तरिकोडीओ उज्जंते सत्तसया सिद्धा ॥४॥ रामसुआ वेण्णि जणा लाडणारिंदाण पंचकोडीओ। पावागिरिवरसिहरे णिव्वाण० ॥५॥ पंडुसुआतिण्णिजणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ। सत्तुंजयगिरिसिहरे णिव्वाण० ॥६॥ संते जे बलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाण० ॥७॥ रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णीलमहणीलो। णवणवदीकोडीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥८॥ णंगाणंगकुमारा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया। सुवणागिरिवरसिहरे णिव्वाण० ॥९॥ दहमुहरायस्स सुआ कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया। रेवाउहयतडग्गे णिव्वाण० ॥१०॥ रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरकूडे। दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठ य कोडिणिव्वुदे वंदे ॥११॥ वडवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे। इंदजीदकुंभयणो णिव्वाण० ॥ १२ ॥ पावागिरिवरसिहरे सुवणभद्दाइमुणिवरा

त्तिउरो। चलणाणईतडग्गे णिव्वाण० ॥ १३ ॥ फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे। गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाण० ॥१४॥ णायकुमारमुणिंदो वालि महावालि चैव अज्झेया। अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाण० ॥ १५ ॥ अचलपुरवरणयरे ईसाणे भायमेढगिरिसिहरे। आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाण० ॥ १६ ॥ वंसत्थलवणणियरे पच्छिम भायम्मि कुंथुगिरिसिहरे। कुलदेसभूषणमुणी णिव्वाण० ॥ १७ ॥ जसरहरायस्स सुआ पंचसयाइं कलिंगदेसम्मि। कोडिसिलाकोडिमुणी णिव्वाण० ॥१८॥ पासस्स, समवसरणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पंच। रिस्सिंदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१९॥

अथ अइसयखेत्तकंड—अतिशयक्षेत्रकांडम्

पास तह अहिणंदण णायद्दहि मंगलाउरे वंदे। अस्सारम्मे पट्टणि मुणिसुव्वओ तहेव वंदामि ॥१॥ बाहुबलि तह वंदमि पोयणपुरहत्थि-

णापुरे वंदे । सांति कुंथव अरिहो वाणारसिए सुपासपासं च ॥ २ ॥ महुराए अहिछित्ते वीरं पासं तहवे वंदामि । जंबुमुणिंदो वंदे णिब्बुइपत्तोवि जंवुवणगहणे ॥३॥ पंचकल्लाणठाणइं जाणवि संजादमज्झलोयम्मि । मणवयणकायसुद्धी सव्वं सिरसा णमस्सामि ॥ ४ ॥ अग्गलदेवं वंदामि वरणयरे णिवडकुंडली वंदे । पासं सिवपुरि वंदामि होलागिरिसंखदेवम्मि ॥५॥ गोमटदेवं वंदामि पंचसयं धणुहदेहउच्चंतं । देवा कुणंति वुट्ठी केसरिकुसुमाण तस्स उवरिम्मि ॥६॥ णिव्वाणठाण जाणिवि अइसयठाणाणि अइसए सहिया । संजादमिच्चलोए सव्वे सिरसा णमस्सामि ॥७॥

जो जण पढइ तियालं णिव्वुइकंडंपि भावसुद्धीए ।
भुंजदि णरसुरसुक्खं पच्छा सो लहइ णिव्वाणं ॥

अथ निर्वाणकांड भाषा

॥ दोहा ॥

वीतराग वंदौं सदा, भाव सहित सिरनाय।
कहूं कांड निर्वाणकी भाषा सुगम बनाय ॥१॥

॥ चौपाई ॥

अष्टापद आदीश्वरस्वामि, वासुपूज्य चंपापुरनामि।
नेमिनाथस्वामी गिरनार, बंदौं भावभगति उर धार ॥२॥
चरम तीर्थंकर चरम शरीर, पावापुर स्वामी महावीर।
शिखरसमेद जिनेसुर बीस, भावसहित बंदौं निशदीस ॥३॥
वरदत्तराय रु इंद मुनिंद, सायरदत्त आदि गुणवृंद।
नगरतारवर मुनि उठकोडि, बंदौं भावसहित कर जोडि ॥४॥

श्रीगिरनार शिखर विख्यात, कोडि बहत्तर अरु सौ सात ।
संबु प्रदुम्न कुमर द्वै भाय, अनिरुध आदि नमूं तसु पाय ॥५॥
रामचंद्रके सुत द्वै वीर, लाडनरिंद आदि गुणधी ।
पांचकोडि मुनि मुक्ति मझार, पावागिरि बंदौं निरधार ॥६॥
पांडव तीन द्रविडराजान, आठकोडि मुनि मुकति पयान ।
श्रीशत्रुंजयगिरिके सीस, भावसहित बंदौं निशदीस ॥७॥
जे बलभद्र मुकतिमें गये, आठ कोड़ि मुनि औरहू भये ।
श्रीगजपंथ शिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूं तिहुंकाल ॥८॥
राम हणू सुग्रीव सुडील, गवगवाख्य नील महानील ।
कोडि निन्यावे मुक्ति पयान, तुंगीगिरि बंदौं धरिध्यान ॥९॥
नंग अनंग कुमार सुजान, पांचकोडि अरु अर्ध प्रमान ।
मुक्ति गये सोनागिरि शीश, ते बंदौं त्रिभुवनपति ईस ॥१०॥

अचलापुर[1]की दिश ईसान, तहां मेढ्रगिरि नाम प्रधान।
साढे तीन कोडि मुनिराय, तिनके चरण नमूं चितलाय ॥१७॥
वंसस्थल वनके ढिंग होय, पश्चिमदिशा कुंथगिरि सोय।
कुलभूषण दिशिभूषण नाम, तिनके चरणनि करूं प्रणाम॥१८॥
जसरथराजाके सुत कहे, देश कलिंग पांचसौ लहे।
कोटिशिला मुनि कोटि प्रमान, बंदन करूं जोर जुगपान ॥१९॥
समवसरण श्री पार्श्वजिनंद, रेसिंदीगिरि नयनानंद।
वरदत्तादि पंच ऋषिराज, ते बंदौं नित धरम जिहाज ॥२०॥
तीनलोकके तीरथ जहां, नित प्रति बंदन कीजै तहां।
मनवचकायसहित सिर नाय, बंदन करहिं भविक गुणगाय ॥२१॥

१। वर्त्तमान एलचपुर।

शीत उष्णकी बाधा सहते।
शत्रु मित्रमें समता रखते॥
परिषह बाइस टारी तुमको लाखों प्रणाम २ ॥ हे मुनिवर० ॥
पांच समिति नित हियमें धरते।
निज कर केशलोंच हैं करते॥
पंच महाव्रतधारी तुमको लाखों प्रणाम २ ॥ हे मुनिवर० ॥
भूमि मांहि शयनासन करते।
अल्प आहार खड़गासन लेते॥
षट् आवश्यक कारी तुमको लाखों प्रणाम २ ॥ हे मुनिवर० ॥
पांच इन्द्री निज वशमें रखते।
दांतन स्नान कभी ना करते॥
वरन चले शिवनारी तुमको लाखों प्रणाम २ ॥ हे मुनिवर० ॥

आसकी फांस छुटे मनसे जब, संतोषामृत स्वाद मिले।
शौच धरम युत कर तप संयम, शिवमारगमें लग जाओ ॥
गंगा यमुना कोटि स्नानसे, मनका मैल नहीं धुलता।
मोह मैल अब शौचसे धोकर, निज निर्मल आतम पाओ
वाह्य प्रपंच त्याग मन वशकर, शौच धरम धारण करके ॥
नित्य निरंजन अमिट अमूरत, चिदानन्द पदको पाओ ॥

मेरी कामना

(द्रौपदी देवी कृत)

जिनमाता ही थाऊंगी मैं मन वच काय संभार ॥टेक॥
झूठी माया झूठी काया झूठा जन परिवार।
स्वातम शुद्ध बनाऊंगी मैं यह संसार असार ॥
चहुंगति गोता खाय रही मैं डूबि रही मँझधार।
भव सागर तिर जाऊंगी मैं धर्मकी ले पतवार ॥

हिंसा चोरी कुशील असतमय लदा परिग्रह भार ।
शौच गंगमें न्हाऊंगी मैं बस्त्राभूषण डार ॥

क्रोध लोभ छल मान अरु ममता करता निशिदिन वार ।
विषयनको मारूंगी मैं अब ले जिनमत तलवार ॥

पाचों इन्द्रीने मिल करके कीना मेरा ख्वार ।
आतम धुनी रमाऊंगी मैं तनसे नेह निवार ॥

राग द्वेष पर विजय प्राप्तकर पहनूं सम्यग्हार ।
मुक्ति पुरीको जाऊंगी मैं चढ़ चारित असवार ॥समाप्त॥

जिया जग भ्रमणा यों तेरा मिटेना ॥टेक॥

पूजे हैं माता कभी शीतला भैरों काली,
देवी कभी तक्ष कभी यक्षकी शरणा जा ली ।

भूत प्रेत कभी पूजे हैं पत्ता डाली ।
ब्रह्मा कभी विष्णु कभी पूजे हैं शंकरवाली ॥

मिथ्या से मनुआ यों तेरा हटे ना ॥

मानता है मुक्ति कभी गंगमें तू न्हानेसे,
पार होता है कभी काशीमें मर जानेसे ।
अग्निमें जलनेसे कभी बर्फमें गल जानेसे,
यज्ञके बीच कभी जीवोंके मरवानेसे ॥

श्रद्धा ये मनकी क्यों तेरी हटेना ॥

पार होनेकी अगर दिलमें है वांछा तेरे,
तजकर मिथ्यात, जैन-धर्मका शरणा ले रे ।
सांचे गुरूदेव दया धर्म तू निशदिन मेरे,
ज्योति चित दान दया धर्ममें अपना दे रे ॥

फिर हितकी गठरिया ये तेरी गठेना ॥

संसार रूपी क्षेत्रसे सुख फल सदा प्राणी चहे।
पर मिले किंपाकके जब बीज हम बोते रहे ॥
अति कठिनतासे मिला मानुष जनम यूं खो दिया।
अन्तमें क्योंकर बने फिर लाख सिर धुनते रहे ॥
रह गया धन धान्य आभूषण सभी यूं ही पड़ा।
हंस इकला उड़ गया सब हाथ मल रोते रहे ॥
सुत मात प्रिय भ्राता स्वजन कोई बना साथी नहीं।
छुट गया तन रात दिन मल मल जिसे धोते रहे ॥

महावीराष्टक स्तोत्र

शिखरिणी छन्द।

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः समं भांति ध्रौव्यव्ययजनिलसंतोऽन्तरहिताः। जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥१॥ अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पन्दरहितं जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यंतरमपि। स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला, महावीर० ॥२॥ नमन्नाकेंद्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं लसत्पादांभोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां। भवज्ज्वालाशांत्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि, महावीर० ॥३॥ यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः। लभन्ते मद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा, महावीर० ॥४॥ कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो विचित्रात्मप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः। अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिर, महावीर० ॥५॥ यदीया वाग्गंगा विविधनयकल्लोलविमला, बृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति। इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता, महावीर० ॥६॥ अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम सुभटः कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः। स्फुरन्नित्यानन्दप्रशमपदराज्याय सजिनः महावीर० ॥७॥ महामोहातंकप्रशमनपराकस्मिकभिषग् निरापेक्षो बन्धुर्विदितमहिमा मंगलकरः। शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुत्तमगुणो, महावीर० ॥८॥ महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेंदुना कृतं। यः पठेच्छृणयाच्चापि स याति परमां गतिं ॥९॥